237 क लेख – परिभाषाए
237 ख – समस्याए
237 ग – व्यवस्था
237 घ – संविधान
237 च – संविधान संशोधन
237 छ – स्वराज्य
237 ज – अपराध

नोट–
(1)भावी भारत का संविधान नामक मेरी पंद्रह वर्ष पूर्व लिखी हुई पुस्तक का आधा भाग ज्ञान तत्व 235 तथा शेष आधा भाग ज्ञान तत्व 236 के रूप मे गया है। दोनो भाग मिलाकर पुस्तक संग्रह करने योग्य है। ज्ञान तत्व 237 भी संग्रह करने योग्य है। निवेदन है कि आप अवश्य संग्रह करे।
(2) प्रत्येक शनिवार की रात 8:30 बजे ए टू जेड टी0 वी0 पर बजरंग मुनि जी का किसी एक विषय पर इंटरव्यू प्रसारित होता है। ए टू जेड डिश एंटिना मे 579 नम्बर पर तथा विग टी0 बी0 मे 425 नम्बर चैनल पर आता है। आप देखे तथा पत्र द्वारा अपने प्रश्न भेजे। उत्तर अगले किसी कार्यक्रम मे टी0 बी0 पर अथवा ज्ञान तत्व के माध्यम से जायगा।

" संकलन कर्ता का निवेदन "

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र कहा जाता है। लोकतंत्र का तात्पर्य है –'लोक निर्णय सर्वोपरि और तद्नुरूप तंत्र अर्थात् संवैधानिक शासन व्यवस्था।' सन् 1950 में लागू भारतीय संविधान में शासन संचालन कार्य में आम नागरिकों को मात्र मतदाता का दायित्व मिला, शेष सब दायित्व राज्य के माध्यम से सरकारों के लिए निश्चित कर दिये गये। इस प्रकार भारतीय लोकतंत्र में 'लोक' सहयोगी तो है किन्तु वास्तव में इस शासन व्यवस्था में उसको सहभागिता शून्य ही है।

महात्मा गांधी की लोक स्वराज्य भावनाओं के आधार पर डॉ. लोहिया और जय प्रकाश नारायण जैसे कई तपस्वियों ने इस लोकात्मा शून्य राज्य व्यवस्था में सुधार हेतु कई प्रयास किये किन्तु परिणाम रहा – 'फैसला पंचों का सिर–माथे परन्तु परनाला तो यहीं गिरेगा।'

चुनाव–दर–चुनाव राजनेता और दल बदलते रहे, साथ ही शासन व्यवस्था बद से बदतर होती जा रही है। प्रत्येक किया की प्रतिकिया होना स्वाभाविक ही होता है। निहितस्वार्थ के कीचड़ से लुथे–पुते राजनेताओं से हटकर समाज विज्ञान के एक मौलिक चिन्तक श्री बजरंग मुनि रामानुजगंज जिला सरगुजा, छत्तीसगढ़, द्वारा सन् 1984 से आज पर्यन्त लिखित सुचिन्तित मौलिक रचनाओं के चयनित अंश इस लघु पुस्तिका के रूप में विचार मंथन हेतु आपके सम्मुख प्रस्तुत है।

इस विचार मंथन का पूर्ण श्रेय श्री बजरंग मुनि और उनके सहचिन्तकों को है और सुहृदय पाठकों की दृष्टि में आने वाली इस संकलन की कमियों का दायित्व मुझ लघु बुद्धि का। आपके रचनात्मक सुझावों और सहयोग का सदा स्वागत है।

उज्जैन (म0प्र0) भवदीय
"विजयादशमों" (रामकृष्ण पौराणिक)
दि0 20ण10ण2007 एमणए अर्थशास्त्र राजनीतिशास्त्र
बी.एड. ; बेसिक द्ध

अनुकमणिका

क.	विषय	क.	विषय
1	परिभाषाएँ	18	श्रममूल्य,बेरोजगारी
2	समस्याएँ	19	कर प्रणाली,वननीति
3	व्यवस्था	20	कश्मीर समस्या
4	संविधान	21	दान,चंदा,भीख
5	संविधान संशोधन	22	भ्रष्टाचार
6	स्वराज्य	23	नक्सलवाद
7	अपराध	24	भावना,विवेक,उपदेश, भाषण,शिक्षा,प्रवचन
8	न्याय व्यवस्था	25	संगठन,हड़ताल चक्काजाम
9	समान नागरिक संहिता	26	सम्प्रदाय और धर्म

10	समानता	27	स्वदेशी
11	मूल अधिकार	28	सुख–दुःख
12	विधायिका	29	भूत–प्रेत,तंत्र–मंत्र
13	परिवार और उसकी संरचना	30	विचारक और साहित्यकार
14	भाषा	31	बहुमत
15	विदेश	32	यदि मैं तानाशाह होता तो
16	आपातकाल		
17	राजनीति		

1. परिभाषाएँ

1. निष्कर्ष निकालने मे परिभाषाओं का बहुत महत्व है। परिभाषा गलत होने से निष्कर्ष भी गलत होना स्वाभाविक है।
2. भारत में अनेक परिभाषाएँ त्रुटिपूर्ण हैं। ये या तो विदेशी परिप्रेक्ष्य में बनी है या भारत में ही किसी कुटिल नीति के अन्तर्गत बनाई गई हैं।
3. भारत का आम नागरिक स्वराज्य, महंगाई, बेरोजगारी, , मुद्रास्फीति, गरीबी रेखा, समान नागरिक संहिता, आचार संहिता आदि शब्दों की परिभाषा न तो जानता है न समझता है। अतः चालाक लोग अपने–अपने ढंग से इन शब्दों के अर्थ और परिणाम प्रचारित किया करते है।

2. समस्याएँ

1. भारत में आन्तरिक समस्याएँ पांच प्रकार की हैं –

(1) वास्तविक(2)कृत्रिम(3)प्राकृतिक (4)भ्रम (5)भूमण्डलीय।

2.वास्तविक समस्याएँ वे हैं जिनका अस्तित्व है और अब तक समाधान नहीं हो सका है जैसे– चोरी, डकैती, आतंक, बलात्कार, मिलावट, जालसाजी, भ्रष्टाचार, आर्थिक असमानता , श्रम शोषण।

3.कृत्रिम–जातिवाद, साम्प्रदायिकता, महिला उत्पीड़न , वन अपराध , असमान वितरण, विदशी कम्पनियों का संकट, चरित्रपतन।

4.प्राकृतिक–भूकम्प, बाढ़ बीमारियॉ, तूफान

5.भ्रम–महंगाई, गरीबी, अशिक्षा, दहेज, मुद्रा स्फीति का दुष्प्रभाव, शिक्षित बेरोजगारी, बालश्रम।

6. भूमण्डलीय–पर्यावरण प्रदूषण, आबादी वृद्धि, जल का अभाव।

7. समस्याओ के समाधान में हमारी प्राथमिकताएँ निम्न कम से होनी चाहिये–

(1) वास्तविक(2)कृत्रिम(3)प्राकृतिक (4)भूमण्डलीय। भ्रम को पूरी तरह दूर कर देना चाहिये। जबकि वर्तमान प्राथमिकताओं का कम इससे ठीक विपरीत है।

3. व्यवस्था

1. समाज विरोधी तत्वों पर समाज के नियंत्रण तथा समाज के सुचारू रूप से संचालन हेतु बनाई प्रकिया को व्यवस्था कहते हैं।
2. स्वयं विकसित, दीर्घकालिक नियम पालन से प्रतिबद्ध व्यक्तियों के समूह को समाज कहते है।
3. समाज के नियमों के विपरीत आचरण करने वाले व्यक्ति को समाज विरोधी कहते ह।
4. राष्ट्र स्वयं में कोई स्वतंत्र इकाई नहीं बल्कि समाज का एक अंग होता है। राष्ट्र भौगोलिक सीमाओं से धिरे भू–भाग की व्यवस्था है जबकि समाज की ऐसी कोई सीमा नहीं होती। समाज व्यवस्था के टूट जाने से समाज की गलत परिभाषाएँ बन गई और राष्ट्र समाज से बड़ा बन बैठा है।
5. व्यवस्था में राष्ट्रीयता सहायक है और राष्ट्रवाद बाधक। राष्ट्रवाद विश्व व्यवस्था बनने में भी बाधक है।
6. राष्ट्रवाद 1. न्याय और अपनत्व 2. हिंसा और अहिंसा 3. राष्ट्र और विश्व के बीच संतुलन नहीं रख पाता है।
7. भारत में तो राज्य ही राष्ट्र बन बैठा हैं । सरकारीकरण को राष्ट्रीयकरण कहा जाता ह जबकि राष्ट्र समाज का भाग है और राज्य समाज का सहायक।

4. संविधान

1. व्यवस्था के लिये समाज द्वारा बनाई गई किसी मूर्त इकाई को राज्य या सरकार कहते हैं ।
2. व्यवस्था समाज की होती है और कार्यान्वयन सरकार का।
3. राज्य के अधिकार, हस्तक्षेप तथा दायित्वों की अधिकतम सीमाएँ निश्चित करने वाले दस्तावेज को संविधान कहते हैं। संविधान और कानून अलग अलग होते हैं। संविधान में राज्य के अधिकतम और समाज के न्यूनतम अधिकारों की सीमाएँ निश्चित होती हैं जबकि कानून राज्य के न्यूनतम और समाज के अधिकतम अधिकारों की सीमाएँ निश्चित करता है।

4. समाज सम्पूर्ण विश्व का प्रतिनिधित्व करता है और सरकार समाज का। अतः सम्पूर्ण विश्व का एक ही संविधान होना चाहिये और एक ही सरकार। समाज का कोई स्थिर स्वरूप न होने से राष्ट्रों ने स्वयं को समाज घोषित कर दिया जो अस्थायी स्वरूप है।
5. किसी भी संविधान के दो गुण निश्चित हैं जो उसे संतुलित बनाते हैं–
   1. न तो इतना लचीला हो कि शासन ही उच्चश्रृखल हो जाये।
   2 न तो इतना कठोर हो कि शासन ठीक से नियन्त्रण ही न कर सके।
6. किसी भी संविधान की सफलता की एक मात्र कसौटी ;प्रमाणिकताद्ध है शासन द्वारा व्यक्ति के मूल अधिकारां की सुरक्षा की गारण्टी। यदि चरित्रपतन होता है तो वह संविधान की विफलता मानी जायेगो।
7. चरित्र पतन के दो ही कारण हो सकते है। समाज पर कठोर नियंत्रण जिससे सत्ताधीशों का चरित्र गिर जाये अथवा नियंत्रण का अभाव जिससे नागरिकों का चरित्र गिरता है।
8. भारतीय संविधान दोनों ही कसौटियों पर चरित्र पतन के लिये उत्तरदायी है।
9. संविधान की अपेक्षा लागू करने वालों को दोष देने का कार्य हास्यप्रद और वैसा ही बेतुका है जैसे पागल खाने के डॉक्टर का यह तर्क कि रोगी उसके कहे को समझता ही नहीं । संविधान की आवश्यकता ही ऐसे गलत चरित्र वालों पर नियंत्रण हेतु हैं। यदि सब लोग स्वयं ही ठीक हो जावें तो संविधान की आवश्यकता ही क्या है?
10. वर्तमान संविधान निम्न कारणों से असफल हुआ–

   1 अपराध नियंत्रण की अपेक्षा जनकल्याण को प्राथमिकता।
   2 अस्पष्ट भाषा, द्विअर्थी भाषा, अधिकाधिक प्दजमतचतमजंजपवदेण
   3 अस्पष्ट उद्दश्य, धाराओं के बीच ब्वदजतंकपबजपवदेण
   4 वर्ग मान्यता।
   5 उच्च आदर्शवादी स्वरूप।
   6 व्यवस्था को इकाईयों में परिवार का अभाव।
   7 राज्य की भूमिका मैनेजर की न होकर कस्टोडियन की होना।

5. संविधान संशोधन

1. कार्यपालिका, न्यायपालिका तथा विधायिका के समन्वित स्वरूप को राज्य, सरकार या शासन कहते है।
2. प्रजातंत्र में कार्यपालिका, न्यायपालिका तथा विधायिका एक दूसरे के पूरक भी होते है और (बिमबा ंदक ठंसंदबम) सन्तुलन स्थापित करने वाले भी।
3. राज्य के तीनों अंग पूरक तथा (ठंसंदबपदह) संतुलन बनाने का कार्य न करके शक्ति संचय की प्रतिस्पर्धा में लग जाते हैं तो राज्य कमजोर हो जाता है और यदि यह स्थिति लम्बे समय तक बनी रहे तो प्रजातत्र की विश्वसनीयता समाप्त होती है।
4. भारत में राज्य के तीनों अंग शक्ति संचय की प्रतिस्पर्धा में लगे हैं।
5. संविधान की सीमाओं में रहकर कार्यपालिका के मार्गदर्शन का कार्य विधायिका का दायित्व है।
6. विधायिका संविधान द्वारा इंगित सीमाओं का किसी भी स्थिति में अतिकमण नहीं कर सकती।
7. संविधान की भूमिका, विधायिका पर नियंत्रण की है। विधायिका को किसी भी स्थिति में संविधान संशोधन का अंतिम अधिकार देना उचित नहीं था। यह बहुत बड़ी भूल है।
8. भारत में विधायिका ने कई बार इस भूल का दुरूपयोग किया ह।
9. संविधान संशोधन की वर्तमान दोष पूर्ण प्रकिया में इस प्रकार संशोधन होना चाहिये कि–

   1 विधायिका के इन अधिकारों पर (बिमबा) अंकुश लगे।
   2 राजनेताओं पर भी (बिमबा) अंकुश हो।
   3 संविधान संशोधन के अधिकारों का दुरूपयोग न हो।
10. संविधान संशोधन की वर्तमान प्रकिया के साथ एक अन्य लोक संसद को भी जोड़ा जाना चाहिये। जिसका स्वरूप इस प्रकार हो।

लोक संसद का प्रारूप

प्रस्ताव

(1) वर्तमान लोकसभा के समकक्ष एक लोकसंसद हो। लोकसंसद की सदस्य संख्या, चुनाव प्रणाली तथा समय सीमा वर्तमान लोक सभा के समान हो । चुनाव भी लोकसभा के साथ हो किन्तु चुनाव दलीय आधार पर न होकर निर्दलीय आधार पर हो।
(2) लोक संसद के निम्न कार्य होगें
   (क) लोकपाल समिति का चुनाव
   (ख) संसद द्वारा प्रस्तावित संविधान संशोधन पर निर्णय
   (ग) सांसद , सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश , मंत्री या राष्ट्रपति के वेतन भत्ते संबंधी प्रस्ताव पर विचार और निर्णय
   (घ)किसी सांसद के विरूद्ध उसके निर्वाचन क्षेत्र के अंतर्गत सरपचो के बहुमत से प्रस्तावित अविश्वास प्रस्ताव पर विचार और निर्णय
   (च) लोकपाल समिति के भ्रष्टाचार के विरूद्ध शिकायत का निर्णय
   (छ) व्यक्ति, परिवार ग्राम सभा, जिला सभा, प्रदेश, सरकार तथा केन्द्र सरकार के आपसी संबंधो पर विचार और निर्णय
   (ज) अन्य संवैधानिक इकाइयों के बीच किसी प्रकार के आपसी टकराव के न निपटने की स्थिति में विचार और निर्णय
(3)लोक सांसद को कोई वेतन भत्ता नही होगा। बैठक के समय भत्ता प्राप्त होगा।

(4) लोक संसद का कोई कार्यालय या स्टाफ नही होगा । लोकपाल समिति का कार्यालय तथा स्टाफ ही पर्याप्त रहेगा।
(5)यदि किसी प्रस्ताव पर लोकसंसद तथा लोक सभा के बीच अंतिम रूप से टकराव होता है तो उसका निर्णय जनमत संग्रह से होगा।

11. संविधान के मूल तत्व समाजशास्त्र का विषय है और सामाजिक विचारकों को निष्कर्ष निकालना चाहिये। संविधान की भाषा राजनीतिशास्त्र का विषय है और राजनीतिज्ञ उसे भाषा दे सकते हैं।
12. भारतीय संविधान के मूल तत्व भी राजनेताओं ने ही तय किए और भाषा भी उन्होंने ही दी। संविधान के मूल तत्व तय करने में समाजशास्त्रियों की कोई भूमिका नहीं रही। या तो अधिवक्ता थ या आंदोलन से निकले राजनीतिज्ञ। संविधान निर्माण में गांधी तक को किनारे रखा गया जो राजनीति और समाजशास्त्र के समन्वय रूप थे।
13. यही कारण था कि राजनेताओं ने संसद को प्रबंधक के स्थान पर अभिरक्षक ; कस्टोडियन द्ध का स्वरूप दिया। यही नहीं, उन्होंने तो संसद के अभिरक्षक स्वरूप की कोई समय अवधि तय न करके देश के साथ भारी षड़यंत्र किया जिसका परिणाम हम आज भुगत रहे हैं।
14. देश के समाज शास्त्रियों को मिल–जुलकर संविधान के मूल तत्वों पर विचार मंथन करके कुछ निष्कर्ष निकालने चाहिये।
15. हमारे संविधान निर्माताओं ने पक्षपातपूर्वक राज्य को एकपक्षीय शक्तिशाली बना दिया। अब देश के समाज शास्त्रियों को मिलकर राज्य और समाज के अधिकारों की सीमाओं की पुनः व्याख्या का आंदोलन शुरू करना चाहिये।

6. स्वराज्य

1. किसी कार्य के परिणाम से प्रभावित व्यक्ति और कर्ता के बीच दूरी जितनी अधिक होगी, कार्य को गुणवत्ता उतनी ही घटती जायेगी। इस दूरी को न्यूनतम करना और प्रत्येक इकाई को अपने इकाईगत निणय की स्वतंत्रता ही लोक स्वराज्य है।
2. किसी इकाई के अपने अधिकार किसी अन्य इकाई को प्रयोग के लिये इस तरह दिये जाते हैं कि उक्त अधिकार के संबंध में मूल इकाई का नियंत्रण का अधिकार शून्य हो जाये तो उक्त अधिकार (त्पहीज) नई इकाई की शक्ति (च्वूमत) बन जाता है तथा इसे केन्द्रीयकरण कहते है।
3. ऐसी शक्ति जब उक्त इकाई द्वारा मूल इकाई को छोड़कर किसी अन्य नीचे की इकाई को प्रयोग के लिये दी जाती है तो उसे सत्ता का विकेन्द्रीयकरण कहते हैं। किन्तु यदि उक्त शक्ति पुनः उसकी मूल इकाई को वापस कर दी जाती है तो उसे अधिकार का विकेन्द्रीयकरण या अकेन्द्रीयकरण कहते है।
4. किसी अच्छी से अच्छी व्यवस्था से भी अपनी व्यवस्था अच्छी होती हैं।
5. यदि व्यवस्था करने वाले की नीयत संदेहास्पद हो तो ऐसी व्यवस्था को एक क्षण भी स्वीकार करना हमारी गुलामी का प्रतीक है। भारत की वर्तमान व्यवस्था की नीयत संदेहास्पद है।
6. सत्ता की कुछ मजबूरियॉ होती है :–

   1 समाज को वर्गो में बांटकर रखना, वर्ग विद्वेष पैदा करना तथा उसे वर्ग संघर्ष तक ले जाना।
   2 शासक आर शासित का विचार मजबूत करना। शासक पक्ष में उच्च भावना तथा शासित पक्ष में निम्न भावना पैदा करना। भारत का आम नागरिक अशिक्षित अयोग्य और अक्षम हैं, ऐसा प्रचारित करके अपनी आवश्यकता सिद्ध करना (यही तर्क अंग्रेज भी दिया करते थे।)
   3 अधिक से अधिक कानून बनाकर आम नागरिक को अपराध भाव से ग्रसित करना (ळनपसजल ब्वदबपवने)
   4 वैचारिक मुद्दों को पीछे करके भावनात्मक मुद्दों पर बहस छेड़ना।
   5 गरीबों पर अप्रत्यक्ष कर लगाकर प्रत्यक्ष सहायता देना तथा सम्पन्नों पर प्रत्यक्ष कर लगाकर अप्रत्यक्ष सहायता देना।
   6 समाज भाव को कमजोर करके राष्ट्र भाव को मजबूत करना।
   7. (क)''प्रशासनिक समस्याओं का सामाजिक आर्थिक,
   (ख)आर्थिक समस्याओं का सामाजिक प्रशासनिक तथा
   (ग)सामाजिक समस्याओं का आर्थिक प्रशासनिक'' समाधान करने का विपरीत प्रयास।
   8. समस्याओं का इस तरह समाधान करना कि उससे नई समस्याएँ पैदा हों।
   9 बिल्लियों के बीच बंदर की भूमिका अर्थात्–

   (क) आर्थिक असमानता कभी कम न हो।
   (ख) शासन असमानता कम करने में निरंतर सकिय दिखे।
   (ग) कमजोर वर्गो में असंतोष की ज्वाला जलती रहे।

   10.अपनी प्राथमिकताओं का कम उलट कर अपराध नियंत्रण को सबसे अंत में रखना तथा अस्तित्वहीन समस्याओं का भूमण्डलीय समस्याओं को सबसे ऊपर रखना।
7. भारत की वर्तमान सत्ता स्वयं के अस्तित्व के लिये ऊपर लिखे मांगो पर चलती हैं। भारत के सभी विपक्षी दल भी सत्ता के लिये दसों तरीकों पर पूरी ईमानदारी से सकिय रहते हैं।
8. पंचायती राज व्यवस्था सत्ता का विकेन्द्रीयकरण है, अधिकारों का नहीं। यह समस्याओ के समाधान की ओर एक कदम है परन्तु माधान नहीं, क्योंकि वर्तमान पंचायतों को सिर्फ प्रशासनिक अधिकार ही दिये गये हैं, कोई विधायी अधिकार नहीं।
9. अधिकारों का अपनी मूल इकाई तक एकाएक नीचे आना अधिकारों का विकेन्द्रीयकरण है। अधिकारों का धीरे–धीरे नीच आना सत्ता का विकेन्द्रीयकरण है।
10. व्यक्ति के आचरण की मर्यादाएँ शासन भी तय करता है और धार्मिक गुरू या सस्थाएँ भी। किन्तु सत्ता या गुरूओं की मर्यादा, आचरण या अधिकारों की सीमाएं वे स्वयं हो तय कर सकते हैं यही विडम्बना है।
11. समाज में दो वर्ग हैं–

1 जो आम नागरिकों को अक्षम, अयोग्य और अपढ़ मानकर स्वयं को उनकी व्यवस्था का उत्तरदायी मानते हैं। इन्हें शासक या गुरू कहते हैं।

2 जो स्वयं को अक्षम, अयोग्य और अपढ़ मानकर पहले वर्ग को अपनी व्यवस्था करने का उत्तरदायी मानते हैं। इन्हें शासित कहते हैं। प्रत्यक्ष रूप से गुरू और शासक का रूप भिन्न हैं पर वास्तव में दोनों की कार्यप्रणाली एक हो है कि आम नागरिकों में न तो कभी निर्णय करने की क्षमता बढ़े नहीं ऐसी इच्छाशक्ति।

12. अधिकारों का विकेन्द्रीयकरण अधिकांश समस्याओं का एक मात्र और सुविधाजनक समाधान हैं। गांधी जी, विनोबा जी तथा जय प्रकाश जी विकेन्द्रित व्यवस्था के पूरी तरह पक्षधर रहे। गाधी जी स्वराज्य के लिये निर्माण और संघर्ष में समन्वय के पक्षधर थे। विनोबा जी संघर्ष की अपक्षा निर्माण पर ज्यादा जोर देते थे। जयप्रकाश जी निर्माण की अपेक्षा संघर्ष के पक्षधर थे किन्तु उन्हें स्वतंत्रतापूर्वक काम करने का अवसर नहीं मिला।

13. धार्मिक गुरूडम राजनैतिक सत्ता प्रणाली से कम हानिकर है क्योंकि धार्मिक गुरूडम स्वेच्छा से स्थापित होता है और कभी भी तोड़ा जा सकता है। जबकि राजनैतिक सत्ता को स्वीकार करना हमारी संवैधानिक मजबूरी है।

14. स्वतंत्रता संघर्ष के बाद सुभाषचंद्र बोस अस्थायी तानाशाही के पक्षधर थे, सरदार पटेल सीमित मताधिकार के, नेहरू जी बालिग मताधिकार के और गांधी जी स्वशासन के। स्वतंत्रता के बाद गांधी जी कम से कम नियंत्रण चाहते थे और नेहरू जी अधिक नियंत्रण के पक्ष में थे। गांधी जी स्वराज्य के पक्षधर थे और नेहरू जी सुराज्य के।

15. गांधी हत्या के बाद नेहरू जी को अपनी नियंत्रण प्रणालो लागू करने में सुविधा हो गई।

16. भारत की जनता को आश्वस्त किया गया कि उसको व्यक्तिगत स्वतंत्रता के स्थान पर सुराज्य प्राप्त होगा।

17. भारत की जनता ने अपनी स्वतंत्रता पर मनमाने अंकुश स्वीकार किये किन्तु व्यवस्था नहीं सुधरी। इस तरह हमारा स्वराज्य तो चला गया परन्तु सुराज्य नहीं मिला।

18. अब भी भारत के राजनैतिक दल सुराज्य का आश्वासन देते हैं जो खोखला है। अतः "हमें सुराज्य नहीं स्वराज्य चाहिये" यह हमारा घोष वाक्य और घोषित लक्ष्य होना चाहिये।

19. कार्यपालिका के पास न्यूनतम दायित्व तथा अधिकतम शक्ति होनी चाहिये। वर्तमान समय में कार्यपालिका के पास अधिकतम दायित्व किन्तु न्यूनतम शक्ति है।

20. तानाशाही की चार पहचान होती है–

    1 शासक का कानून हो।
    2 शासक कोई व्यक्ति हो और उस व्यक्ति को संविधान बनाने या संशोधित करने का पूरा अधिकार हो।
    3 शासक की नियुक्ति में आम नागरिकों की कोई भूमिका न हो।
    4 आम नागरिकों के कोई मौलिक अधिकार न हा।

21. साम्यवाद् और तानाशाही में सिर्फ इतना ही अंतर है कि साम्यवाद् एक व्यक्ति की तानाशाही न होकर एक वर्ग की तानाशाही होता है।

22. प्रजातंत्र या लोकतंत्र में–

    1 कानून का शासन होता है।
    2 कानून व्यवस्था का होता है।
    3 शासक आम नागरिकों द्वारा चुने जाते हैं।
    4 चुने हुये लोगों को संविधान संशोधन का पूरा अधिकार होता है।
    5 आम नागरिकों को मौलिक अधिकार प्राप्त होते हैं।
    6 व्यवस्था में नागरिक सहयोगी होते हैं सहभागी नहीं।
    7 संसद की भूमिका कस्टोडियन की होती है।

23. 1. स्वराज्य और लोकतंत्र में यह अंतर होता है कि लोकतंत्र में जनता द्वारा चुने हुय लोग शासक होते है जबकि स्वराज्य में जनता द्वारा चुने हुये लोग व्यवस्थापक होते हैं।
    2. नागरिकों के मूल अधिकार होते है।
    3. चुने हुये लोगों को संविधान संशोधन में प्रस्तावक तक की भूमिका होती है, सम्पूर्ण नहीं।
    4. व्यवस्था में नागरिक सहभागी होते हैं सिर्फ सहयोगी नहीं।
    5. संसद की भूमिका मैनेजर की होती है।

24 (क) तानाशाही में या तो सुव्यवस्था होती है या कुव्यवस्था। न अव्यवस्था संभव है न स्वव्यवस्था।

(ख)लोकतंत्र में या तो अव्यवस्था होती है या स्वव्यवस्था। न सुव्यवस्था संभव है न कुव्यवस्था। लोकतंत्र की दो स्थितियां होती है। (1)लोकतांत्रिक जीवन पद्धति (2)लोकतांत्रिक शासन पद्धति। पश्चिम के देशा के जीवन पद्धति म लोकतंत्र आया, किन्तु भारत, पाकिस्तान, इराक, अफगानिस्तान, बाग्लादेश आदि शासन पद्धति में। जीवन पद्धति का लोकतंत्र व्यवस्था को मजबूत करता है आर शासन पद्धति का लोकतंत्र कमजोर। ऐसी लोकतांत्रिक शासन पद्धति में अव्यवस्था ही होती है। न सुव्यवस्था न कुव्यवस्था। लम्बे समय की अव्यवस्था तानाशाही का आधार बनती है। पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, अफगानिस्तान, इराक, नपाल आदि देशों का यही हाल है। भारत भी ऐसे खतरे की ओर लगातार बढ़ रहा है।

(ग) अव्यवस्था कुव्यवस्था से अधिक खराब होती है और स्वव्यवस्था सुव्यवस्था से अच्छी।

(घ) तानाशाही से लोकतंत्र इसलिये अच्छा होता है कि लोकतंत्र से लाक स्वराज्य की ओर जाना आसान है, तानाशाही में कठिन।

(च) भारत में वर्तमान समय में लोकतांत्रिक शासन पद्धति है जिसके लक्षण अव्यवस्था के रूप में स्पष्ट हैं और परिणाम है तानाशाही का खतरा। ऐसी तानाशाही सैनिक भी हो सकती है, नक्सलवादी भो या किसी व्यक्ति या दल की भी। ऐसे खतरे का समाधान है लोकतंत्र को शासन पद्धति के स्थान पर जीवन पद्धति की ओर ले जाना जिसका मार्ग है सुशासन के स्थान पर स्वशासन अर्थात् लोकस्वराज्य इसे ही सहभागी लोकतंत्र या स्वशासन भी कहा जाता है।

(छ) लोकतंत्र की विश्व में वर्तमान परिभाषा है लोक नियुक्त तंत्र अर्थात् समाज द्वारा नियुक्त प्रतिनिधियों का शासन। इस परिभाषा को बदल कर लोक नियंत्रित तंत्र अर्थात् ''समाज द्वारा नियंत्रित शासन कर देना चाहिये''।

25. ग्राम स्वराज्य और लोक स्वराज्य शब्दों क अभिप्राय लगभग समान होते हैं। फिर भी लोक स्वराज्य शब्द अधिक व्यापक स्पष्ट और सुविधाजनक है। दोनों प्रयत्नों को एक दूसरे के साथ समन्वय करना चाहिये।
26. आदर्श ग्राम और स्वराज्य ग्राम पृथक परिणाम वाले प्रयास हैं। स्वराज्य ग्राम आदर्श ग्राम की ओर बढ़ने का एक आवश्यक कदम है। किन्तु बिना ग्राम स्वराज्य के आदर्श ग्राम अर्थात् ग्राम स्वावलम्बन स्वरोजगार कुरीति निवारण आदि के प्रयास न सिर्फ मृगतृष्णा है बल्कि ग्राम स्वराज्य में बाधक भी है। शासन मुक्ति हमारा प्रथम प्रयास होना चाहिये। गांधीजी शासन मुक्ति के प्रबल पक्षधर थे किन्तु गांधी जी के बाद शासन मुक्ति के प्रयत्नां को किनारे करके अभाव मुक्ति और शोषण मुक्ति का असम्भव प्रयास किया गया।

27. अपराध

1 व्यक्ति के मौलिक अधिकारों क उल्लंघन को अपराध कहते हैं।
2 अपराधों को छोड़कर अन्य शासकीय कानूनों का उल्लंघन गैर–कानूनी (प्ससमहंस) है अपराध (ब्तपउम)नहीं।
3 अपराधिया को ही समाज विरोधी तत्व कहते ह।
4 कुल मिलाकर अपराध पॉच प्रकार के हैं – (1)चोरी, डकैती, लूट, (2)बलात्कार, (3)मिलावट, कमतौल, (4)जालसाजी, धोखाधड़ी (5)आतंक, गुण्डागर्दी, बलप्रयोग। तस्करी, जुआ, शराब, वैश्यावृत्ति आदिवासी हरिजन महिला कानून उल्लंघन, कर चोरी, दहेज आदि गैर कानूनी कार्य है, अपराध नहीं।
5 भारत में अपराधियों का प्रतिशत करीब 2 है बिहार में यह प्रतिशत 3 से 4 तक तथा छत्तीसगढ़ में 1 के करीब है।
6 समाज विरोधी तत्व अल्पसंख्या में होते हुए भी बहुमत पर हावी होते जा रहे हैं।
7 समाज में यदि समाज विरोधी तत्वों का प्रतिशत 5 हो जावे तो समाज एसे तत्वों का गुलाम हो सकता है। राजनीति में अपराधी तत्वों का प्रतिशत 15 के आस–पास है।
8 भारत के पिछले 60 वर्षों में सरकार चाहे किसी की रही हो परन्तु समाज विरोधी तत्वों का मनोबल लगातार बढ़ा है और समाज का मनोबल लगातार कम हुआ है।
9 गुण्डों का न तो कोई धर्म होता है और न कोई जाति।
10 कानून का उल्लंघन करने वाले हर क्षेत्र में सफल है आर कानून का पालन करने वाले असफल।
11 शरीफ लोगों को कभी इकट्ठा होने ही नहीं दिया जाता। जब भी ये लोग इकट्ठा होने लगते ह तो पेशेवर राजनीतिज्ञ धर्म, जाति, क्षेत्रीयता, उम्र, लिंग, आर्थिक स्थिति, उत्पादक उपभोक्ता, भाषा और राष्ट्रीयता के नाम पर इन्हें आपस में ही विभाजित कर देते हैं।
12 भारत की जनता शांति व्यवस्था की मांग करती है तो उसे शांति व्यवस्था के स्थान पर कानून मिलते ह जिनका कोई उपयोग नहीं।
13 पहले समाज विरोधी तत्वों की अनेक राजनीतिक नेताओं से सांठ–गांठ रहती थी परन्तु अब ऐसे तत्व स्वयं ही राजनीति में आने का प्रयास कर रहे हैं।
14 अपराध नियन्त्रण को सफल बनाने के लिये अपराध और गैर कानूनी को अलग करना होगा तथा एक सशक्त और अधिक अधिकार सम्पन्न सरकार बनानी होगी।
15 अपराधियों के मन से कानून का भय तथा समाज का कानून पर से विश्वास लगातार घट रहा है। परिणाम स्वरूप अपराधी कानून का खुला उल्लंघन करता है और आम आदमी कानून अपने हाथ में लेकर न्याय प्राप्ति पर विश्वास करने लगा है।
16 भारत के 98 प्रतिशत लोग अपराध भाव से ग्रसित हैं। कानूनों की अनावश्यक अधिकता तथा कानून के उल्लंघन को ही अपराध मानने से यह विकट स्थिति बनी है।
17 पुलिस और न्यायालय की क्षमता का आकलन करके ही कानून बनाना चाहिये। यदि कानून अधिक होंगे और व्यवस्था कम तो अव्यवस्था बढ़ती जाएगी।
18 वर्तमान समय में भारत की पुलिस और न्यायालय कुल आबादी के डेढ़ प्रतिशत भाग पर ही अपराध नियंत्रण की क्षमता रखते है। दूसरी ओर कानूनों की अधिकता 99 प्रतिशत तक लोगा को अपराधी घोषित करती है। पुलिस और न्यायालय की क्षमता बढ़ाकर तथा कानूनों की संख्या घटाकर ही यह असंतुलन दूर करना संभव है।
19 कानूनों की संख्या तत्काल कम करके उन्हें निन्यान्नवे प्रतिशत के स्थान पर डेढ़ प्रतिशत तक कर देना चाहिये। जब पुलिस और न्यायालय की क्षमता बढ़ेगी तब और कानून बनाये जा सकते है।
20 अट्ठानवे प्रतिशत समस्याऍ शासकीय हस्तक्षेप अथवा अनावश्यक कानूनों का (ठल च्तवकनबज) उत्पादन है। कार्य प्रणाली परिवर्तन तथा प्राथमिकताओं के पुनः निर्धारण से य समस्याऍ स्वयं दूर हो सकती है।
21 यदि कोई शासन सामाजिक अपराध नियंत्रण में अक्षम है तो समाज को उसे–
  1 उचित मार्गदर्शन देना चाहिये।
  2 उसे बदलकर नया शासन बना देना चाहिये।
  3 आपातकाल घोषित करके सारी शक्ति स्वयं में तब तक केन्द्रित कर लेनी चाहिये जब तक कोई व्यवस्था की परिस्थितियां पैदा न हो जावे। वर्तमान परिस्थितियां आपातकाल के अनुरूप हैं।

22 समाज को कभी किन्हीं भी परिस्थितियों में शासन पर पूरी तरह निर्भर नहीं हो जाना चाहिये।
23 समाज के अनेक प्रवक्ता किसी धर्म, राजनीतिक दल, निश्चित धारणा वाले गुट, राष्ट्रीय आदि भिन्न –भिन्न रंग के चश्में से वास्तविकताओं को देखकर तदनुसार उनका विश्लेषण करते हैं।
24 समाज को किसी व्यक्ति या समूह द्वारा प्रस्तुत किसी विश्लेषण पर विचार करने के पूर्व उसके विचारों की प्रतिबद्धता को देख लेना चाहिये कि वह धर्म, राजनीति आदि में किसी प्रकार से प्रतिबद्ध तो नहीं है।
25 रामराज्य की सफलता का आकलन अपराध नियत्रण की सफलता पर निर्भर रहता है।
26 रामराज्य की एक ही परिकल्पना है अपराध मुक्त समाज। मंदिरों या मस्जिदों की संख्या रामराज्य का आधार नहीं बन सकती।
27 धर्म, राजनीति, व्यवसाय सभी क्षेत्रों में गुण्डों और आतंकवादियों की घुसपैठ हो गई है।
28 कोई गुण्डा यदि दस बार भी खून कर दे तो उसकी फटाफट जमानत हो जाती है तथा वह बेगुनाह सिद्ध होकर छूट जाता है परन्तु किसी शरीफ आदमी द्वारा यदि किसी गुण्डे का वध कर दिया जाये तो वह बेचारा जीवन भर जेल में ही सड़ता रहता है।
29 भारत की शासन व्यवस्था में समाज विरोधी तत्वों का महत्वपूर्ण हस्तक्षेप है। वे अपनी सुविधा अनुसार– (1) कानून बनवाते हैं (2) प्राथमिकताएँ तय करते हैं (3) बुद्धिजीवियों से प्रचार कराते है (4) संचार माध्यमों का उपयोग करते हैं, (5) जन–मानस को अपने अनुसार ढाल लेते हैं।
30 समाज विरोधी तत्व बहुत मायावी होते हैं। भावना प्रधान लोगों के समक्ष दीन भाव प्रकट करके, स्वार्थी तत्वां से समझौता करके तथा कमजोरों को डरा धमकाकर ये अपनी सहायता में खड़ा कर लेते हैं।
31 गुण्डे इतने चालाक होते हैं कि विवाह, पूजा, खेल, चुनाव या अन्य सामाजिक कार्यो में ही अपनी सकिय भूमिका बनाकर प्रशंसा प्राप्त करते रहते हैं।
32 कई लोग रहते समाज के साथ हैं परन्तु स्वार्थवश अथवा अज्ञानवश वे हमेशा समाज विरोधी तत्वों का हित चिन्तन करते रहते हैं। समाज विरोधी तत्वों पर नियंत्रण हेतु की जाने वाली किसी भी योजना में उन्हें प्रजातंत्र हनन की गंध आती है।
33 पुराने समय में ''ज्ञान और त्याग'' को सर्वोच्च सम्मान प्राप्त था । कालान्तर में धन और पद भी इस प्रतिस्पर्धा में शामिल हो गये। धूर्तता और गुण्डागर्दी के सम्मिलित हो जाने के बाद सवोच्च सम्मान को प्रतिस्पर्धा से ''ज्ञान और त्याग'' तो बाहर हो चुके हैं, धन और पद भी पिछड़ते जा रहे हैं।
34 अपराधों में सजा का आकलन उसके समाज पर पड़ने वाले प्रभाव के आधार पर होना चाहिये न कि किसी अन्य सिद्धान्त के आधार पर। क्योंकि सजा का उद्दश्य पीड़ित को संतोष और अपराधी को दण्ड के साथ–साथ समाज में भय उत्पन्न करना भी होता है।
35 यदि समाज में दण्ड से भय कम हो जावे तो सजा की मात्रा आर अमानवीयता को उस सीमा तक बढ़ाना चाहिये जो समाज में अपराध के प्रति भय उत्पन्न कर सके।
36 वर्तमान परिस्थितियों में अल्पकाल के लिये सार्वजनिक चौक पर फॉसी भी प्रारंभ की जा सकती है।
37 फॉसी स्वयं में एक अमानवीय कार्य है। फॉसी को इस तरह संशोधित, करना चाहिये कि वह सजा प्राप्त को मृत्यु तक का एक विकल्प भी दे सके और समाज पर लम्बे समय तक भय उत्पादक प्रभाव भी छोड़ सके।
38 फॉसी की सजा प्राप्त अपराधी यदि अपनी दोनों आंखे जीवित अवस्था में दान देकर अन्धत्व स्थिति में तथा जमानत पर कुछ समय के लिये जीवित रहने की इच्छा व्यक्त करे तो हमें उसे आवश्यक शर्तो के साथ जमानत पर छोड़ देने का न्यायालयों को अधिकार देना चाहिये।
39 राष्ट्र की सीमाओं की सुरक्षा का दायित्व सेना पर तथा व्यक्तिगत स्वतंत्रता की सीमा रेखा की सुरक्षा का दायित्व पुलिस और न्यायालय पर है। राष्ट्र की सीमाएँ सुरक्षित हैं और व्यक्ति की स्वतंत्रता असुरक्षित। हमारे राजनेता तथा सामाजिक संस्थाओं के लोग भी चन्दा, हड़ताल, कानून आदि के द्वारा व्यक्ति की स्वतंत्रता पर आकमण करते रहते हैं। दूसरी ओर राष्ट्र की सीमाओं की सुरक्षा का राग अलापते हैं जबकि हमारी सेनाओं ने ऐसा कोई आहवान नहीं किया है।
40 भारत में डकैती और हत्या में मुआवजे का प्रावधान नहीं है, जबकि एक्सीडेंट या आग लगने में है। सुरक्षा शासन का दायित्व नहीं माना जाता।
41 भारत के राष्ट्रीय, प्रान्तीय तथा स्थानीय बजट का कुल मिलाकर एक प्रतिशत ही आन्तरिक सुरक्षा पर खर्च होता ह शेष 99 प्रतिशत अन्य विकास कार्यो पर खर्च होता है।
42 भारतीय जनता पार्टी की पहचान दो आधारों पर केन्द्रित रही है– 1. शराफत, 2. हिन्दुत्व । अब भारतीय जनता पार्टी द्वारा भी कट्टर हिन्दुत्व की ओर झुक जाने से शराफत पूरी तरह अनाथ होती जा रही है।
43 किसी भी राजनतिक दल के चुनाव घोषणा पत्र में कानून का पालन करने वालों का मनोबल ऊॅचा करने का कोई उल्लेख नहीं है।
44 किसी भी राजनैतिक दल के पास अपराध नियंत्रण की कोई प्रभावकारी योजना नहीं है।
45 पिछले चालीस वर्षो में जनकल्याणकारी कार्यो में तो हम आगे बढ़े हैं परन्तु अपराध नियंत्रण में हम पीछे हटे हैं। फिर भी कोई राजनेता या सामाजिक कार्यकर्ता अपराध नियंत्रण की चर्चा करने से भी कतराता है।
46 विशेष घोषित क्षेत्र में विशेष घोषित समय के लिए समाज में आतंकवाद बनाकर रखने वालों के विरूद्ध पुलिस न्यायालय में गुप्त मुकद्मा प्रस्तुत करें, सत्र न्यायालय अपनी स्वतंत्र न्यायिक गुप्तचर सेवा से जांच कराने के बाद सजा दे तो पुलिस के अत्याचारों से भी मुक्ति मिल सकती है तथा आतंकवादियों या बड़े समाज विरोधी तत्वों पर भी नियंत्रण हो सकता ह।
47 न्यायालयों को न्याय में अवरोध मानकर नये बन रहे कानूनों को न्यायालय की परिधि से बाहर रखने की परम्परा खतरनाक है। इसकी अपेक्षा न्यायालयों की कार्य प्रणाली को ऐसा परिवर्तित करें कि न्यायालय अपराध नियंत्रण में सक्षम भूमिका प्रस्तुत करें।

48 न्यायालय की कार्य प्रणाली के परिवर्तन में प्रजातंत्र की गलत परिभाषा बाधक है। प्रजातंत्र की सही परिभाषा तो अपराध नियंत्रण में सहायक होती है।

49 हमारे विधायक या सांसद कानून बनाने के लिए नियुक्त होते हैं। कानून बनाने में गंभीर न होकर नल, बिजली, नियुक्ति, सड़क आदि वह सारा कार्य करते हैं जा एक सामान्य कर्मचारी का होता है।

50 समाज सर्वोच्च है और शासन समाज का अंग।

51 शासन द्वारा सर्वोच्च बनने का प्रयास करना अनाधिकार चेष्टा है, परन्तु शासन सफलतापूर्वक यह प्रयास कर रहा है।

52 अधिकारों का राजनीतिज्ञों के पास होता अधिकाधिक ध्रुवीकरण राजनीतिज्ञों के दूषित व्यवहार या आचरण का कारण है। समाज को चाहिये की ऐसे ध्रुवीकरण को रोके। अधिकारविहीन समाज और सर्वाधिकार सम्पन्न शासन की स्थापना अनुचित और अवांछनीय है।

53 किसी गुण्डे द्वारा अपराध में फंस जाने की अवस्था में हमारे नेताओं की आत्मा दया से भर जाती है, उसे छुड़ाने में थाने से कोर्ट तक मानवीय आधार पर बहुत मदद करते हैं, परन्तु किसी शरीफ की मदद करने में कानून उनके आड़े आ जाता है।

54 अधिकारों का केन्द्रीयकरण ही राजनेताओं को गुण्डों, भविष्यवक्ताओं, धनपतियों या धूर्तो के समक्ष आत्म समर्पण करा देता है।

55 कांग्रेस पार्टी किसी भी उचित अनुचित तरीके से सत्ता पर बने रहना चाहती है। जनता दल जातीय, भाजपा साम्प्रदायिक, साम्यवादी आर्थिक ध्रुवीकरण कराकर सत्ता परिवर्तन का प्रयास कर रहे हैं कई दल क्षेत्रीयता की भावना भड़का कर प्रांतीय सत्ता से ही संतोष करने को तैयार है। कोई भी दल शराफत के आधार पर ध्रुवीकरण का प्रयास नहीं कर रहा।

56. दुनियाँ में सर्वाधिक शोषण, अत्याचार और हत्याएँ धर्म के नाम पर होती हैं। दूसरा कम राजनीति का है और तीसरा जातिवाद का, व्यक्तिगत स्वार्थपूर्ण अपराधों का कम तो चौथा होता है अतः अधिकांश सामाजिक संस्थाएँ धर्म, राजनीति, आर जाति को हथियार बनाती है।

57. कानूनी समस्याओं का कानूनी समाधान, आर्थिक समस्याओं का आर्थिक समाधान तथा सामाजिक समस्याओं का सामाजिक समाधान खोजा जाना चाहिये।

58. वर्तमान समय में कानूनी समस्याओं का सामाजिक समाधान खोजा जा रहा है। डकैती उन्मूलन हेतु हृदय परिवर्तन का उचित मार्ग बताया जाता है और छुआछूत, दहेज, शराब–बंदी, आदि सामाजिक समस्याओं के लिये कानूनों का सहारा लेने को मांग की जाती है जो उचित नहीं।

59. अपराध नियंत्रण के लिये संतुलित शक्ति प्रयोग होना चाहिये। यदि शक्ति प्रयोग आवश्यकता से कम होगा तो अपराधियों की सहन शक्ति उसी तरह बढ़ जाती है जिस तरह कम दवा के प्रयोग का कीटाणुओं पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

60. वर्तमान समय में शक्ति प्रयोग असंतुलित तथा आवश्यकता से कम है। परिणाम स्वरूप अपराध नियंत्रण में उनका प्रभाव लगातार घटता जा रहा है।

61. भय, किसी भी व्यक्ति से अपने अनुसार आचरण कराने का सबसे अधिक सुविधाजनक और सफल किन्तु अन्यायपूर्ण तथा अमानवीय मार्ग है।

62. भय तीन प्रकार से प्रचलित है– 1. ईश्वर का, 2. समाज का, 3. सरकार का। ईश्वर का भय विश्वास घटने से प्रभावहीन हो गया है। समाज का स्वरूप ही अस्तित्वहीन हो गया है। सरकार ही भय पैदा करने का एकमात्र आधार है। सरकार द्वारा भय पैदा करने का एकमात्र आधार है शक्ति का सन्तुलित उपयोग।

63. भय का उपयोग बिल्कुल अंतिम स्थिति में ही करना चाहिये, सामान्यतया नहीं। सामान्य स्थिति में भय का प्रयोग जितना घातक होता है, विशेष स्थिति में भय का प्रयोग न करना या कम करना उससे अधिक घातक होता है।

64. वर्तमान समय में नक्सलवादी आतंकवादी अथवा अपराधी तत्व समाज में अपना भय पैदा करने में सफल है जबकि सरकार उनके अंदर भय पैदा करने में सफल नहीं है क्योंकि सरकार भय (शक्ति) का प्रयोग आवश्यकता से कम कर रही है।

65. प्रवृत्ति के आधार पर मनुष्य तीन प्रकार के हैं–

1. दैवी 2. मानवीय 3. आसुरी। पहली श्रेणी को सामाजिक दूसरी को असामाजिक तथा तोसरी को समाज विरोधी कहते हैं। किसी एक्सीडेंट ट्रेन के कराहते हुये यात्रियों की सेवा करने वाला सामाजिक, दुर्लक्ष्य करने वाला असामाजिक तथा लूट–पाट करने वाला समाज विरोधी होता है। सामाजिक प्रवृत्ति को प्रोत्साहन, असामाजिक का मार्गदर्शन तथा समाज विरोधी का दमन हो उचित है। समाज विरोधियों के हृदय परिवर्तन के प्रयास आदर्श हैं, व्यावहारिक नहीं। दुर्भाग्य से वर्तमान गांधीवादी या सर्वोदयी भी यही भूल कर रहे हैं जो समाज विरोधियों का हृदय परिवर्तन तथा शराब, जुआ, वैश्यावृत्ति को भय तथा कानून से नियंत्रित करना चाहते हैं।

8. न्याय व्यवस्था

1. पुलिस और न्यायालय पर अधिक बोझ के कारण उनकी कार्य क्षमता घटती है।
2. पुलिस अपराध नियंत्रण में बिल्कुल अक्षम होती जा रही है क्योंकि आवश्यकता के अनुरूप पुलिस बल में वृद्धि ही नही की गई।
3. पिछले चालीस वर्षो में आबादी बढ़ी है, अपराध बढ़े हैं, परन्तु पुलिस बल की संख्या इस अनुपात में नहीं बढ़ी है।
4. स्वतंत्रता के पूर्व पुलिस बल की कार्य क्षमता का आकलन करके ही उन्हें कार्य दिया जाता था। अब तो सारा कार्य बिना आकलन के ही पुलिस पर थोप दिया जाता है।

5. भारत की न्याय प्रणाली दुनियॉ में सबसे कमजोर है जहॉ अपराधों में सजा का प्रतिशत सिर्फ एक है। नब्बे प्रतिशत अपराध ता थाने तक भी नहीं पहुॅच पाते। दस प्रतिशत में एक को सजा होती है।
6. न्यायपालिका अपराध नियंत्रण म अपनी भूमिका को भूल गई है। वह पुलिस के द्वारा व्यक्ति के अधिकार हनन में व्यक्ति (विशेषकर पुलिस की दृष्टि में अपराधो) के अधिकारों की प्रहरी की भूमिका में है।
7. अन्य विभागों की अपेक्षा न्यायपालिका में अच्छे विद्वान और ईमानदार लोगों का प्रतिशत बहुत अधिक है परन्तु अपराध नियंत्रण में उसकी असफल भूमिका का कारण न्यायपालिका की संवैधानिक कार्यप्रणाली में है न कि व्यक्ति में।
8. पलिस द्वारा अनेक आतंकवादियों या बड़े अपराधियों को मीसा में बंद करने या गोली मार देने तक की घटनाए आम बात होती जा रही है। जो प्रजातंत्र के विरूद्ध होते हुये भी मजबूरी माना जाने लगा है।
9. पुलिस द्वारा अपराध नियंत्रण के लिये अवैध रूप से कानून अपने हाथ म लेने का भी लोग इसीलिए समर्थन करने लगे हैं कि न्यायालय अपराध नियंत्रण में विफल रहा। न्यायालय द्वारा अपराधी के निर्दोष छूटने की अपेक्षा पुलिस द्वारा अपराधी को फर्जी मुठभेड़ में मार डालना अधिक अच्छा समझा जा रहा है। यदि ऐसी घटनाएँ बार–बार हो तो चिन्ता का विषय है। पुलिस की अपेक्षा न्यायपालिका को अधिक आत्ममंथन करना चाहिए, क्योंकि कानून की अपेक्षा न्याय अधिक महत्वपूर्ण होता है। न्याय के हित में कानूनों में संशोधन करना चाहिए।
10. अपराधियों के मन से कानून का घटता भय तथा समाज के मन से कानून का उठता विश्वास प्रजातंत्र के लिय खतरे के संकेत हैं।
11. न्यायालयों की कार्य प्रणाली में एक सीमा से अधिक लचीलापन अपराधियों का कवच है।
12. पुलिस हमारी रक्षक है। एक घण्टा भी पुलिस को हटाकर हम अनुभव कर सकते हैं। राजनैतिक हस्तक्षेप तथा समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार पुलिस में भी व्याप्त है। कानून की असफलता भी पलिस को गैर कानूनी अत्याचार हेतु प्रेरित करती है। समाज विरोधी तथा भावना प्रधान लोग पुलिस के विरूद्ध अनवरत प्रचार करके उसका मनोबल गिराते हैं जबकि वास्तविक दोष न्यायपालिका या विधायिका में है।
13. अपराधी के निर्दोष छूटने का दायित्व पलिस पर डालने वाले जज को यदि कुछ दिनों के लिये थानेदार बना दिया जाय तो उसके मुकद्मे पहले वाले थानेदार की अपेक्षा अधिक असफल होंगे।
14. न्यायालय तथा पुलिस न्याय की रक्षा नहीं करते बल्कि कानून की रक्षा करते हैं क्योंकि वह कानून के अनुसार न्याय (श्रनेजपबम ।बबवतकपदह जव स्ूं) से बंधे है।
15. न्याय की रक्षा करना विधायिका का दायित्व है क्योंकि वह (स्ूं ।बबवतकपदह जव श्रनेजपबम) न्याय के अनुसार कानून से प्रतिबद्ध है।
16. भारत में न्याय और सुरक्षा का सारा दोष पुलिस और न्यायालय पर डालने की परम्परा चल पड़ी है जबकि वास्तविक दोष इनका न होकर विधायिका का है।
17. गुप्त मुकद्मा प्रणाली पुलिस और न्यायालय को असफलताओं का अच्छा समाधान है। इससे कानून शक्तिशाली होगा जो न्याय की सुरक्षा करेगा।
18. अपराध के तीन कारण बताये जाते हैं। 1. मजबूरी 2. अशिक्षा 3. अव्यवस्था। इस समय आर्थिक स्थिति भी सुधरो है और शिक्षा में भी विस्तार हुआ है फिर भी अपराध नहीं घटे हैं। क्योंकि अपराधों के बढ़ने का एकमात्र कारण है समाज और कानून का घटता भय। हमारा दुर्भाग्य है कि सरकार आर्थिक स्थिति में अपराधों का समाधान खोज रही है तो सामाजिक संस्थाएँ शिक्षा आर शराब बंदी में।
19. न्यायपालिका को विधायिका और कार्यपालिका के विरूद्ध प्रहरी की भूमिका तक सीमित रहना चाहिये। वर्तमान समय में विधायिका पर न्यायपालिका का एकपक्षीय हस्तक्षेप बहुत अच्छा महसूस हो रहा है। किन्तु न्यायपालिका को जनहित याचिकाओं में जो आनंद आ रहा ह वह खतरनाक हैं। जनहित याचिकाएँ बहुत सोच समझकर स्वीकार होनी चाहिये।
20. 1. न्याय आर व्यवस्था एक दूसरे के पूरक हैं।
2. न्याय और व्यवस्था के बीच समन्वय, सहयोग और सामंजस्य होना चाहिये। यदि न्याय या आदर्श अधिक होगा और व्यवस्था कम तो अव्यवस्था उत्पन्न होगी और अन्ततः इसका परिणाम अन्याय होगा। यदि व्यवस्था मजबूत होगी और न्याय कमजोर होगा तो तानाशाही होगी आर इसका परिणाम भी अन्याय होगा।
3. सिद्धान्त या आदर्श न्याय प्राप्ति की इच्छा पैदा करते है जिसकी पूर्ति व्यवस्था से होती है। पिछले पचास वर्षो में व्यवस्था की क्षमता का आकलन किये बिना अति उच्च और महत्वाकांक्षी आदर्श स्थापित किया गया। इससे व्यवस्था कमजोर होती गई। इस अव्यवस्था को दूर करने हेतु व्यवस्था की वर्तमान क्षमता का ठीक ठीक आकलन करके तद्नुसार आदर्श या सिद्धान्तों को संशोधित करना चाहिये। अपराधों की नई परिभाषा इस हेतु उचित कदम हो सकता है।

9. समान नागरिक संहिता

1. समान नागरिक संहिता का अर्थ है– भारत के पत्येक नागरिक के लिये समान कानून। भारत सौ करोड़ नागरिकों का देश होगा, धर्मो, जातियों, भाषाओं का संघ नहीं।
2. समान नागरिक संहिता तथा समान आचार संहिता (ब्वउउवद ब्पअपस ब्वकम) (ब्वउउवद ब्वकम व ब्वदकनबज) बिल्कुल भिन्न विषय है। दोनों का अंतर न समझने से भ्रम होता है।
3. आचरण व्यक्ति का व्यक्तिगत व्यवहार होता है। इस संबंध में न तो राज्य हस्तक्षेप कर सकता है और न ही नियम बना सकता है।
4. नागरिक व्यवहार नागरिक का सामाजिक व्यवहार होता है इस संबंध में समाज के प्रतिनिधि के रूप में राज्य हस्तक्षेप भी कर सकता है और नियम भी बना सकता है।
5. धर्म, जाति, भाषा, व्यवसाय, लिंग आदि के आधार पर किये गये कार्य तब तक व्यक्तिगत आचरण है जब तक वे किसी अन्य के वैसे ही आचरण में कोई हस्तक्षेप न करे। शासन या समाज को व्यक्ति के ऐसे मामलों में कोई हस्तक्षेप नहीं करना चाहिये।
6. समाज में टकराव तथा वर्ग विद्वेष दूर करने हेतु समान नागरिक संहिता आवश्यक है।

7. समान नागरिक संहिता तत्काल लागू कर देने से महिलाओं, आदिवासियों, हरिजनों, विकलांगा, गरीबों तथा वृद्धों पर बुरा असर पड़ सकता है। इस प्रभाव को ठीक करने के लिये निम्न कार्य किये जा सकते है।

1. महिलाओं को परिवार की सम्पत्ति में समान अधिकार देकर।
2. आदिवासियों, हरिजनों को श्रम मूल्य वृद्धि द्वारा।
3. विकलांगों तथा वृद्धां को शासन के पास बची राशि सभी नागरिकों में समान रूप से बांटकर तथा ऐसे लोगों के सम्पूर्ण भरण–पोषण का दायित्व लेकर।

8. भारतीय जनता पार्टी की समान नागरिक संहिता सिर्फ मुसलमानों पर अंकुश लगाने तक सीमित है।

9. समान नागरिक संहिता लागू होने पर गो हत्या बंद करने की मांग निरर्थक हो जायेगी। भा.ज.पा. यह स्वीकार नहीं कर सकती।

10. समान नागरिक संहिता मुसलमानों के व्यक्तिगत व्यवहार में बाधक नहीं है क्योंकि विवाह राज्य का विषय न होकर व्यक्तियों का आपसी पारिवारिक या सामाजिक विषय होगा।

11. महिलाओं पर पुरूषों का अत्याचार शब्द असत्य और घातक है। समाज में महिलाओं का पिछड़ना पुरूष प्रधान समाज व्यवस्था में समयानुसार परिवर्तन न करने की भूल मात्र है, अत्याचार नहीं। यदि पुरूष स्वाभाविक अत्याचारी होता तो पति के मरने पर पत्नी प्रसन्न होती।

12. महिलाएँ परिवार में समानता के अधिकार से वंचित है समाज में नही। एक पुरूष कलेक्टर की पत्नी एक पुरूष चपरासी को दबाकर रखती है।

13. महिलाओं को परिवार की सम्पत्ति में समान अधिकार न मिलना तथा विवाह के समय लड़की की अपेक्षा अधिक योग्य वर की तलाश ही इसके कारण हैं।

14. महिला आरक्षण राजनैतिक शक्ति को और कम परिवारों तक केन्द्रित कर देगा।

15. एक पुरूष और एक महिला को मिलाकर परिवार बनता है। महिला आरक्षण अन्य महिलाआ के लिये भी प्रसन्नतासूचक नहीं। किसी अन्य महिला की अपेक्षा अपने परिवार के पुरूष को नौकरी या पद प्राप्त होने पर अधिक प्रसन्नता होती है।

16. आरक्षण समाप्त करने की वर्तमान आवाज षड़यंत्र है। श्रम मूल्य वृद्धि, महिलाओं को सम्पत्ति में समान अधिकार, असहायो का भरण–पोषण का दायित्व शासन को देकर आरक्षण समाप्ति तथा समान नागरिक सहिता एक साथ लागू होनी चाहिये।

17. हजारों वर्ष पूर्व सवर्णो द्वारा लागू किये गये जातीय आरक्षण का दुष्परिणाम है कि आज अनेक जातियां पिछड़ गई हैं। वैश्य और क्षत्रियों का आरक्षण तो बहुत सीमा तक समाप्त है किन्तु ब्राम्हणों का समाज पर जातीय एकाधिकार अभी समाप्त नहीं हुआ है। वर्तमान आरक्षण और उक्त सामाजिक आरक्षण को एक साथ समाप्त करना चाहिये।

18.तात्कालिक रूप से समाधान हेतु आरक्षण का लाभ ले चुके व्यक्ति और उसके परिवार को सदा के लिये आरक्षण से बाहर कर देना चाहिये। किन्तु वर्तमान में श्रम शोषक अवर्ण ऐसे किसी प्रयास का भरपूर विरोध करंगे।

10ण समानता

1ण समानता स्वयं में एक भ्रामक और अस्पष्ट शब्द है।

2. कोई भी दो व्यक्ति कभी समान नहीं होते। प्राकृतिक संरचना से ही प्रत्येक व्यक्ति के गुण, कर्म, स्वभाव, क्षमता अलग–अलग है और इसस प्राप्त परिणाम भी अलग अलग है। ऐसे भिन्न परिणामों को राज्य द्वारा समान करने का प्रयत्न न तो संभव है न उचित।

3. समानता का अर्थ व्यक्तियों के आपसी संव्यवहार में समानता न होकर राज्य और व्यक्तियों के बीच के आपसी सव्यवहार में समानता होना चाहिये।

4. राज्य और राजनीति से जुड़े लोग, लागों में असमानता की भावना पैदा करने, उसकी असमानता दूर करने के प्रयास तथा उसे कभी समान न होने देने में उसी तरह लगे रहते हैं जैसे बिल्लियों के बीच बंदर।

5. संविधान की उद्देश्यिका से अवसर की समानता शब्द को हटाकर अवसर की स्वतंत्रता शब्द लिखना उचित होगा।

6. आर्थिक असमानता पर नियंत्रण आवश्यक है।

7. स्वतंत्रता और समानता का इस तरह सामंजस्य हो कि दोनों एक दूसरे के पूरक हों। सम्पत्ति पर समान प्रतिशत से कर लगाकर उक्त राशि का सबके बीच समान वितरण दोनो का सामंजस्य स्थापित कर सकता है।

8. आर्थिक सामाजिक असमानता भी घातक है और अधिकारों की असमानता भी। किन्तु अधिकारों की असमानता आर्थिक सामाजिक असमानता से अधिक घातक है। एक सर्वोच्च धनवान से किसी धनहीन को उतना खतरा नहीं जितना किसी तानाशाह से सामान्य व्यक्ति को हो सकता है क्योंकि तानाशाह के पास पुलिस, सेना आर कानून की भी शक्ति होती है।

9. वर्तमान समय में सत्ता के खेल के लिये सामाजिक आर्थिक असमानता के नारे का सर्वाधिक उपयोग किया जाता है। एक भी ऐसा संगठन या व्यक्ति नहीं दिखता जो सामाजिक आर्थिक असमानता के विरूद्ध तो आंदोलन करे किन्तु जिसका राजनैतिक उद्धेश्य न हो।

10. सामाजिक आर्थिक असमानता दूर करना मजबूतों का कर्तव्य है। कमजोरों का अधिकार नहीं। स्वतंत्रता हमारा अधिकार है और शासन का दायित्व। दुर्भाग्य से सामाजिक आर्थिक असमानता दूर करना कमजोरों का अधिकार प्रचारित किया जा रहा है और अधिकारों की असमानता दूर करने की कोई चर्चा ही नही करता।

11. मूल अधिकार

1. व्यक्ति के वे अधिकार जिनमें राज्य सहित कोई भी अन्य किसी भी परिस्थिति में उनकी सहमति के बिना कोई कटौती न कर सके जब तक उस व्यक्ति ने किसी अन्य व्यक्ति के वैसे ही अधिकारों में कटौती का अपराध न किया हो, उसे मूल अधिकार कहते हैं।
2. मूल अधिकार चार होते है– 1. जीने का 2. अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का, 3. स्वनिर्णय का 4. सम्पत्ति का।
3. वर्तमान संविधान में वर्णित मूल अधिकार गलत परिभाषा के परिणाम हैं। धार्मिक स्वतंत्रता स्वनिर्णय के अन्तर्गत आ जाती है।
4. रोजगार शिक्षा आदि वर्तमान समय में तो मूल अधिकार में है। किसी भी नागरिक के रोजगार या शिक्षा मे कोई अन्य रूकावट नहीं डाल सकता।
5. वर्तमान समय में मूल अधिकारों में और वृद्धि की मांग परिभाषा की अस्पष्टता का परिणाम है।
6. सम्पत्ति को मूल अधिकार में शामिल करने से जो क्षति होगी, निकालने से और अधिक क्षति होगी। यदि सम्पत्ति को मूल अधिकार से हटाया गया तो राज्य को सम्पत्ति के साथ छेड़ छाड़ करने के असीम अधिकार मिल जावेंगे।

7. मूल अधिकार प्राकृतिक हाते हैं, संविधान से प्राप्त नहीं। संविधान तो इनकी व्यवस्था मात्र करता है।
8. संविधान जिन अधिकारों को समय–समय पर दे या ले सकता है वे संवैधानिक अधिकार होते हैं, मूल नहीं।

12. विधायिका

1. विधायिका का कार्य लोकसभा और राज्यसभा जैसी चुनी हुई तथा उच्च पदस्थ शासकीय अधिकारियों के समन्वय से चलता है।
2. चुने हुये लोग नीति और नीयत का तथा अधिकारी कार्य क्षमता का प्रतिनिधित्व करते हैं। चुने हुये लोग ज्ञान और विवक तथा अधिकारी लोग बुद्धि का प्रतिनिधित्व करते हैं।
3. चुने हुये लोगों की योग्यता की एकमात्र कसौटी नागरिकों का विश्वास है। कर्मचारियों की योग्यता के लिए उनकी उम्र बौद्धिक क्षमता या अन्य मापदण्ड बनाये जा सकते हैं।
4. सांसदों या विधायकों के लिये न्यूनतम योग्यता का मापदण्ड गलत है। यहां तक कि पागलपन या विदेशी होना भी अयोग्यता का आधार नहीं होना चाहिये क्योंकि भारत के आम नागरिकों की योग्यता से अधिक और काई योग्यता का मापदण्ड उचित नहीं।
5. समाज के न्यायपूर्ण तथा सुव्यवस्थित संचालन हेतु विधान बनाने वाली अधिकार सम्पन्न इकाई को विधायिका कहते है।
6. वही सरकार अच्छो होती है जो न्यूनतम शासन करे। भारत मे इस सिद्धान्त के विपरीत कार्य हुआ।
7. भारत में विधायिका ने अनावश्यक कानून बना–बनाकर अनेक जटिलताएँ उत्पन्न की है। विधायिका का कर्तव्य है कि वह कानून बनाने के पूर्व चार परिस्थितियों की समीक्षा अवश्य करें–

क. समाज में होता अन्याय।
ख. महत्व के कम में उक्त अन्याय की प्राथमिकता।
ग. प्रशासनिक क्षमता।
घ. कानून के लाभ और दुष्प्रभावों की तुलना।

भारत की वर्तमान विधायिका सस्ती प्रशंसा के लोभ में तीन स्थितियों की समीक्षा की अवहेलना करके सिर्फ सामाजिक न्याय की दिशा में चलना शुरू कर देती है।

8. यह कहना गलत है कि चुनाव सुधारों से बहुत कुछ सुधर सकता है। चुनाव सुधार वर्तमान विकृतियों में पांच या दस प्रतिशत ही प्रभाव डाल सकते हैं। वर्तमान विकृतियां सत्ता के केन्द्रीयकरण का परिणाम है और इसका एकमात्र समाधान है अधिकारों का विकेन्द्रीयकरण।
9. राजनैतिक अस्थिरता से व्यवस्था भी अस्थिर होती है और बार–बार चुनावों का डर भी बना रहता है।
10. राजनैतिक स्थिरता के लिये लोकसभा को इस तरह स्थिर कर दिया जाये कि उसके चुनाव प्रतिवर्ष 1/5 सीटों के हों। राज्यसभा अस्थिर हो सकती है। राज्य सभा के चुनाव पांच वर्ष के लिये एक बार हो सकते हैं। इस प्रणाली से कई लाभ होंगे–

1. अनावश्यक राजनैतिक परिवर्तन नहीं होगा।
2. प्रत्येक राजनैतिक दल को प्रतिवर्ष चुनावों का अवसर मिलने से स्थिरता आयेगी।
3. चुनावों में विदेशी सकियता समाप्त हो जायेगी।
4. चुनावों का खर्च एक बार में न होकर प्रतिवर्ष समान रूप से होगा।
5. राजनीति में निरन्तरता आयेगी।

13. परिवार और उसकी रचना

1. परिवार समाज व्यवस्था की पहली जीवंत इकाई है। परिवार स्वयं एक स्वतंत्र इकाई है, स्त्री–पुरूष का संघ नहीं जैसा पश्चिम की व्यवस्था मानती है। समाज में स्त्री और पुरूष एक दूसरे के पूरक हैं, विकल्प नहीं। समाज में स्त्री और पुरूष को पृथक वर्ग के रूप में मान्यता देना या प्रोत्साहन घातक है, परिवार और समाज व्यवस्था के लिए विघटनकारी है।
2. भारतीय संविधान में परिवार शब्द या परिवार व्यवस्था के संबंध में कुछ भी नहीं है।
3. संवैधानिक व्यवस्था में परिवार को भी मान्यता मिलनी चाहिए।
4. सामूहिक सम्पत्ति तथा सामूहिक उत्तरदायित्व के आधार पर एक साथ रहने वाले व्यक्तियों के समूह को परिवार कहते हैं।
5. परिवार की सम्पत्ति पर सबका समान अधिकार होगा अर्थात् किसी का कोई अधिकार तब तक नहों होगा जब तक वह परिवार में है।
6. परिवार के प्रत्येक अच्छे बुरे कार्य के परिणाम में सबका बराबर दायित्व या अधिकार होगा। परिवार के किसी भी सदस्य के लिये अपराध का उत्तरदायित्व भी पूरे परिवार का होना चाहिये।
7. परिवार मे दो पद होने चाहिये– 1. मुखिया जो कार्यपालक हो तथा सबकी राय से चुना जाये। 2. प्रमुख, जो औपचारिक हो, पारम्परिक हो तथा परिवार के सदस्यों में सबसे अधिक उम्र का हो।
8. सम्पत्ति का विभाजन, मुखिया का चुनाव, प्रमुख का चुनाव (उम्र छोड़कर) अपराधों के परिणाम में सहभागिता या निर्णय में सहभागिता में उम्र, लिंग या योग्यता का कोई भेद नहीं होना चाहिये।
9. परिवार की संरचना में रक्त संबंधों की अनिवार्यता नहीं होनी चाहिये। परिवार शब्द की नई व्यवस्था चीन के कम्यूनिज्म, गांधीजी के ट्रस्टीशिप के आर्थिक सिद्धान्त और भारतीय परिवार पद्धति को एक साथ मिलाकर बनाई गई है।
10. सम्पत्ति के संबंध में अब तक तीन सिद्धान्त स्थापित हुये है।–

1. पश्चिम का व्यक्तिगत सम्पत्ति का 2. गांधीजी का ट्रस्टीशिप का 3. साम्यवाद का सामाजिक सम्पत्ति का। वर्तमान समय में पहला सिद्धान्त चल रहा है। मेरा पारिवारिक सम्पत्ति का सिद्धान्त व्यक्तिगत सम्पत्ति और ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त के बीच का है जिसमें सम्पत्ति पूरे परिवार की सामूहिक होगी जो परिवार से पृथक होते समय ही सदस्य संख्या के आधार पर उसे मिल सकती है तथा वह सम्पत्ति स्वयं की न होकर उस परिवार की होगी जिसमें वह जाकर शामिल होगा।

11. प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी परिवार का सदस्य होगा।
12. भारत की परिवार व्यवस्था को तोड़ने में पश्चिम के देशों की भी बहुत रूचि है और वामपंथियों की भी। परिवार व्यवस्था को कमजोर करने के नये—नय प्रयोग होते रहते ह।
13. विवाह में लड़के लड़की की स्वीकृति, परिवार की सहमति और समाज की अनुमति को परम्परा के रूप में स्वीकार किया गया है। प्रेम विवाहों को प्रतिष्ठा का प्रश्न मानकर उनका विरोध करना जितना घातक है उससे अधिक घातक है उनका प्रोत्साहन क्योंकि ऐसे विवाह परिवार व्यवस्था को गंभीर क्षति पहुॅचाते हैं।

14. भाषा

1. अपने मनोभाव और विचार दूसरे व्यक्ति तक ठीक उसी अर्थ में पहुॅचाने के माध्यम को भाषा कहते हैं।
2. भाषा सर्वदा श्रोता की होती है, वक्ता की नहीं।
3. भाषा सर्वदा ऐसी होनी चाहिये जिससे श्रोता आसानी से वक्ता के मनोभावों को समझ सके।
4. भाषा को राष्ट्र, संस्कृति या धर्म के साथ जोड़ना गलत भी है और हानिकारक भी। अटल जी का संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी भाषा का प्रयोग करना हानिकारक प्रयास था।
5. किसी इकाई को किन्हीं अन्य इकाइयों के आपसी संवाद की भाषा तय करने का कोई अधिकार नहीं है। उक्त इकाई अपने संवाद की भाषा निश्चित करने हेतु स्वतंत्र है।

15. विदेश

1. भारत की विदेश नीति उच्च राष्ट्रवाद पर टिकी हुई है। इसे अनावश्यक टकरावों से बचना चाहिये।
2. पंजाब समस्या श्रीमतो गांधी और श्रीलंका समस्या राजीव गांधी क अनावश्यक उलझाव का परिणाम थी। दोनों को इसी से हानि उठानी पड़ी।
3. विदेश नीति राष्ट्रवाद के ऊपर विश्व व्यवस्था की ओर झुकी हुई होनी चाहिये। संविधान में ऐसी व्यवस्था होनी चाहिये कि संयुक्त राष्ट्रसंघ या विश्व मंच के निर्णय का सरकार आसानी से अस्वीकार न कर सके।
4. विदेशों से मजबूत सुरक्षा हेतु भारत के अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं से 15 कि.मी. का भारतीय क्षेत्र ''सैनिक क्षेत्र'' घोषित होना चाहिये। यहॉ या तो कोई निवास नहीं करेगा या करेगा तो सैनिक सत्ता की शर्तो के आधार पर। इस क्षेत्र में रहने वालों को मूल अधिकार प्राप्त नहीं होगा।

16. आपातकाल

1. किसी समस्या विशेष से निपटने में सामान्य उपायों की विफलता निश्चित होने पर व्यवस्था को प्रदत्त विशेष अधिकारों की परिस्थितियों को आपातकाल कहते हैं।
2. आपातकाल की तीन परिस्थितियॉ होती है—

1. राष्ट्रीय आपातकाल— जब विदेशी आकमण का गंभीर खतरा हो।
2. आर्थिक आपातकाल— जब आर्थिक असमानता बहुत बढ़ गई हो।
3. सामाजिक आपातकाल— जब समाज के लोग अपराधियों के विरूद्ध गवाही देने से डरते हों तथा अपराध नियंत्रण सम्भव नहीं हो रहा हो।
4. राष्ट्रीय आपातकाल में प्रत्येक परिवार की सम्पूर्ण सम्पत्ति पर 10 प्रतिशत तक आपातकर लगाने का अधिकार व्यवस्था को रहना चाहिये।
5. आर्थिक आपातकाल में प्रत्येक परिवार की सम्पूर्ण सम्पत्ति पर दो प्रतिशत आपातकर लगाकर प्रत्येक नागरिक में बराबर—बराबर बांटने का अधिकार व्यवस्था को होना चाहिये।
6. सामाजिक आपातकाल में उस जिले के कलेक्टर, एस.पी. और जिला सत्र न्यायाधीश को मिलकर गुप्त मुकद्मा प्रणाली शुरू करने की स्वीकृति देने का अधिकार होना चाहिये।

17. राजनीति

1. किसी भी राजनैतिक दल के पास समाज की प्रमुख समस्याओं को कोई समाधान नहीं है।
2. राजनीति में भ्रष्ट लोगों का प्रतिशत व्यापारियों या शासकीय कर्मचारियों से अधिक है। परन्तु हर नेता दूसरे सभी वर्गो को भ्रष्ट या चोर कहकर स्वयं को ईमानदार कहा करता है।
3. भारत में इस समय असंख्य नियम और कानून हैं। कानूनों के ढेर में आवश्यक कानूना का भी महत्व समाप्त हो गया है।
4. भारत में लगातार सत्ता का रानीतिज्ञों के हाथों में केन्द्रीयकरण हो रहा है। वर्तमान में पंचायत व्यवस्था में कुछ और व्यवस्था जनता के हाथ से निकलकर नये नेताओं के पास केन्द्रित हो जायेगी।

5. राशन का ब्लैक या किसी विभाग के भ्रष्टाचार के विरूद्ध उठने वाली आवाज यदि राजनीतिज्ञों की हो तो प्रायः उसके पीछे राशन दुकान लेने या चन्दा लेने जैसा षड़यंत्र छिपा रहता है। बहुत कम लोग सामाजिक उद्दश्यों के लिये ऐसी मांग करते हैं।
6. भ्रष्ट व्यापारी, कर्मचारी तथा राजनेताओं का मुँह बंद रखने के उद्देश्य से ही सस्ता राशन जैसी व्यवस्था शुरू को जाती है। जिस दिन शासन अपराधी तत्वों पर निर्भरता खत्म कर देगा उसी दिन सस्ता राशन सस्ता तेल जैसी भष्ट व्यवस्थाएँ समाप्त हो जायेगी।
7. न कोई परिवार सिर्फ उत्पादक होता है, न सिर्फ उपभोक्ता। अधिकांश परिवारों की दोनों भूमिकाएँ होती है। शासन या उसके लोग इन्हें दो वर्ग मानकर कभी उत्पादक के पक्ष में आवाज लगात हैं कभी उपभोक्ता के पक्ष में।
8. न्यायालय तथा कार्यपालिका की तुलना में विधायिका लगातार शक्तिशाली होती रही हैं। संसद सर्वोच्च एक नारा बन गया। अब दो तीन वर्षो से न्यायपालिका ने भी कानून या संविधान की परवाह न करते हुये विधायिका पर अपना वर्चस्व बढ़ाया है।
9. न्यायपालिका विधायिका और कार्यपालिका को अपनी–अपनी सीमाओं और मर्यादाओं में रहना चाहिये किन्तु ये सभी अपनी सर्वोच्चता सिद्ध करने में लगे हैं।

18. श्रम मूल्य वृद्धि, बेरोजगारी

1. व्यापारियों द्वारा येनकेन प्रकारेण धन कमाना उद्दश्य मान लिया जाता है। मिलावट और धोखा व्यापारिक कुशलता का चिन्ह बन गया है।
2. सफल राजनीति की पहचान है उत्पादक और उपभाक्ता मूल्यों के बीच न्यूनतम अंतर। दुभाग्य से भारत में यह बढ़ रहा हैं। अनावश्यक नियंत्रण और टैक्स इस अंतर को और अधिक बढ़ाते हैं।
3. व्यापारी कभी टैक्स नहीं देता। टैक्स तो उत्पादक तथा उपभोक्ता देता है। व्यापारी तो एक माध्यम मात्र हैं।
4. टैक्स और नियंत्रण अनैतिक व्यापारियों के लिय बसन्त का मौसम है। ये भ्रष्ट व्यापार में बहुत सहायक होते हैं।
5. टैक्स और नियंत्रण भ्रष्टाचार की भो जड़ है। इनकी संख्या और मात्रा जितनी अधिक होगी भष्टाचार भी उतना ही अधिक होगा।
6. शासन द्वारा घोषित श्रम मूल्य को कृत्रिम और श्रमिक को श्रम के बदले प्राप्त मूल्य को वास्तविक श्रम मूल्य कहते हैं।
7. हमारे क्षेत्र छत्तीसगढ़ में कृत्रिम श्रम मूल्य 72 रूपय और वास्तविक 40 से 45 रूपये है। हमारे सटे हुए राज्य झारखंड मे कृत्रिम श्रम मूल्य 72 और वास्तविक 35 से 40 रूपये है।
8. न्यूनतम श्रम मूल्य वही माना जा सकता है जिस पर सरकार काम देने को बाध्य हो।
9. कृत्रिम ऊर्जा पश्चिम की परिभाषा में श्रम सहायक है जबकि भारत में श्रम प्रतिस्पर्धी है।
10. गांधीजी का मशोनीकरण घटाओ का श्रम सिद्धांत असफल रहा है। वर्धा धानो भी पावर धानी में बदल रहा है।
11. मार्क्स ने मशीनी औद्योगोकरण का समर्थन किया और उसके लाभ में श्रमिकों की भागीदारी की वकालत की परन्त मार्क्स की श्रम नीति भी असफल रही। अब मार्क्सवादी भी मशीनोकरण के विरूद्ध खड़े हो रहे हैं।
12. तीव्र मशीनी औद्योगीकरण तभी लाभदायक होता है जब उत्पादन क्षेत्र के बाहर उसकी खपत के लिये कमजोर क्षेत्र तैयार हों। ऐसी औद्योगिक इकाईयां उत्पादन क्षेत्र की बेरोजगारी तो दूर करती हैं परन्तु उपभोक्ता क्षेत्रों में कइ गुना बेरोजगारी बढ़ा देती ह।
13. सस्ती कृत्रिम ऊर्जा भारत की अधिकांश आर्थिक समस्याओं का कारण है। कृत्रिम ऊर्जा की भारी मूल्य वृद्धि अनेक आर्थिक समस्याओं का समाधान है।

1. कृत्रिम ऊर्जा की खपत बढ़ने से प्रदूषण अधिक बढ़ता है।
2. श्रमिक उत्पादन की अपेक्षा मशीनी उत्पादन सस्ता होता है। परिणाम स्वरूप श्रम उत्पादन की मांग घटने से बेरोजगारी फैलातो है।
3. श्रम का मूल्य नहीं बढ़ पाता।
4. विदेशी मुद्रा का अभाव होता है। जिसे ठीक करने के लिये अनिवार्य उपभोक्ता वस्तुओं का निर्यात करना पड़ता है।
5. अनिवार्य उपभोक्ता वस्तुओं पर कर लगाने पड़ते हैं।
6. सम्पन्नों का व्यय घटता है आय बढ़ती है परन्तु श्रमिकों के लिये इसके विपरीत होता है।
7. शहरी जीवन सस्ता और रोजगार मूलक होने से शहरी आबादी गांवों की तुलना में लगातार बढ़ती जाती है।
8. विदेशी कर्ज बढ़ता जा रहा है।
9. आवागमन सस्ता होने से उद्योग केन्द्रित होते हैं।
14. यह कहना गलत है कि भारत में कृत्रिम ऊर्जा के मूल्य बढ़े हैं। सच्चाई यह है कि कृत्रिम ऊर्जा पिछले पचास वर्षो से सस्ती हुई हैं। सन् 1947 के रूपये के मूल्य से वर्तमान रूपये की तुलना करना होगा।
15. ज्यों–ज्यों सम्पन्नता बढ़ती है त्यों–त्यों कृत्रिम ऊर्जा पर निर्भरता तथा उपयोग की मात्रा बढ़ती हैं। ज्यों–ज्यों गरीबी बढ़ती है त्यों–त्यों श्रम और रोटी पर निर्भरता बढ़ती जाती है।

1. आश्चर्य – भारत में श्रम उत्पादन जैसे– बीड़ी पत्ता, साल बीज, महुआ आदि वनोपज तथा अनिवार्य उपयोग जैसे–रोटी, कपड़ा, दवा, पशु चारा, इट, खपड़ा आदि पर भारी कर हैं। बीड़ी पत्ता इकट्ठा करने वाले को आधी कीमत दी जाती है। सरसों तेल पर पांच रूपये लीटर, दाल पर सवा रूपया किलो टैक्स है। लकड़ी पर तीस प्रतिशत तथा खली पर तीन प्रतिशत टैक्स है।
2. आश्चर्य – भारत में कृत्रिम ऊर्जा पर सब्सीडी है। अखबार, कागज, पोस्टकार्ड पर सब्सीडी है। पोस्टकार्ड की कीमत बढने से गरीब मर जायेगा और अनाज, कपड़ा दवा पर टैक्स लगने पर नहीं मरेगा। यह सिद्धांत मेरी समझ से बाहर होने से मैंने इसे ''आश्चर्य'' लिखा है।

3. आश्चर्य – भारत में साईकिल पर टैक्स लिया जाता है जो कि प्रति साईकिल करीब तीन सौ तक है। किन्तु इसके खिलाफ अब तक कोई आंदोलन नहीं हुआ।

4. आश्चर्य – भारत के राजनेताओं या समाज शास्त्रियों को यह पता ही नहीं है कि–

1. अपने खेत में अपने श्रम से पैदा किये गये पेड़, बांस।
2. साईकिल।
3. रोटी, कपड़ा, मकान, दवा, घास–भूसा पर भी भारी कर लगता है।

16. भारत में बेरोजगारी की परिभाषा पश्चिम से ली गई है जो अनुपयुक्त है क्योंकि पश्चिम श्रम अभाव देश है और भारत श्रम बहुल्य।
17. न्यूनतम घोषित श्रम मूल्य पर योग्यतानुसार कार्य का अभाव ही बेरोजगारी माना जायेगा। भारत में 50 रूपये प्रतिदिन पर काम करने वाले मजदूर को रोजगार प्राप्त और दो तीन सा रूपये रोज पर भी काम न करके सौ की प्रतीक्षा कर रहे को बेरोजगार माना जाता है।
18. बेरोजगारों की वर्तमान सूची में एक भी नाम बेरोजगार के नहीं हैं क्योंकि वे सब न्यूनतम श्रम मूल्य पर काम करने को तैयार नहीं है।
19. भारत में वास्तविक बेरोजगारों में से किसी का नाम शासकीय सूची में अंकित ही नहीं हैं क्योंकि वे मजबूरीवश बहुत कम मजदूरी पर काम कर रहे हैं।
20. बेरोजगारी दो प्रकार की है– 1. कृत्रिम 2. वास्तविक। शासन द्वारा घोषित श्रम मूल्य और वास्तविक श्रम मूल्य का अंतर वास्तविक बेरोजगारी है जबकि शासन द्वारा घोषित योग्यता का मूल्य और घोषित श्रम मूल्य के बीच का अंतर कत्रिम बेरोजगारी है।
21. भारत में प्रत्येक व्यक्ति की कय शक्ति बढ़ी है।
22. गरीबों की कय शक्ति बहुत कम और अमीरों की तीव्रगति से बढ़ी हैं। भारत के आर्थिक विकास के आंकड़ों से स्पष्ट है कि तैंतीस प्रतिशत श्रमजीवियों की विकास दर एक प्रतिशत, मध्यम वर्ग की नौ प्रतिशत तथा तैंतीस प्रतिशत उच्च वर्ग की सत्रह प्रतिशत के आसपास है जिसका औसत निकालकर प्रचारित होता है। आज भी भारत की तेइस प्रतिशत आबादी ऐसी है जिसकी दैनिक आय प्रति व्यक्ति चौदह रूपसे से कम है।
23. भारत में गरीबी या गरीबों की संख्या घट रही है। बढ़ने का प्रचार गरीबी की गलत परिभाषा के कारण है।
24. भारत में श्रम शोषण के लिये चार षड़यंत्र किये जाते हैं–

क. (1)कृत्रिम ऊर्जा मूल्य नियंत्रण।
(2)न्यूनतम श्रम मूल्य वृद्धि की शासकीय घोषणाएँ।
(3)शिक्षित बेराजगारी दूर करन के सरकारी प्रयास।
(4)सामाजिक न्याय को उच्च प्राथमिकता।

ख. भारत के सभी बुद्धिजीवी वामपंथियों के नेतृत्व में इन चारों प्रकार के प्रयत्नों के आधार पर मांग उठाते रहते हैं तथा पूजीपतियों के समर्थक ऐसी मांगों को स्वीकार कर लेते ह।

ग. इन चार प्रयत्नों के परिणामों से वामपंथियों को वर्ग संघर्ष के विस्तार में सुविधा होती है, क्योंकि आर्थिक असमानता तथा श्रम शोषण में कमी साम्यवाद के विस्तार में घातक है।

25. आर्थिक सामाजिक असमानता दूर करने का सबसे आसान तरीका है श्रम मूल्य वृद्धि। पूँजीपतियों और बुद्धिजीवियों ने श्रम की मूल्य वृद्धि को रोके रखने के लिये उपरोक्त चारों नीतियो पर ईमानदारी से प्रयास किया है। भारत के सभी दक्षिणपंथी तथा वामपंथी राजनैतिक दल श्रम शोषण के चारों सिद्धान्तों पर मिलकर काम करते है। वामपंथी तो स्वयं को श्रम हितैशी घाषित करके श्रम शोषण के सिद्धान्तों की वकालत करते हैं।
26. भारत की अधिकांश सामाजिक आर्थिक समस्याओं का समाधान श्रम मूल्य वृद्धि में निहित है। श्रम मूल्य वृद्धि के लिये उपरोक्त चार बाधाएँ तत्काल दूर करने की आवश्यकता है।
27. श्रम मूल्य वृद्धि अपराध नियंत्रण में भी आंशिक सहयोगी होगी। श्रम मूल्य वृद्धि सामाजिक न्याय भी ह और कानून व्यवस्था सहायक भी।
28. (क) भारत में अर्थ व्यवस्था के अन्तर्गत दो वर्ग हैं (1) गामीण, श्रमजीवी, मूल उत्पादन में लगा हुआ, गरीबी रेखा के नीचे, (2) शहरी, बुद्धिजीवो, प्रसंस्कृत उधोग या व्यवस्था म लगा हुआ, गरोबी रेखा के उपर। हमारी अर्थनीति पहले वर्ग को प्रोत्साहित करने की होनी चाहिये। इससे यदि दूसरे वर्ग पर आंशिक विपरीत भी प्रभाव पड़े तो ठीक है। दुर्भाग्य से हमारी अर्थनीति पहले वर्ग को कम और दूसर को अधिक प्रोत्साहन दे रही है। वर्तमान ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना पहली बार पहले वर्ग के आंशिक पक्ष में बनी है। इसका व्यापक विस्तार होना चाहिये। दुर्भाग्य से इसे प्रभावहीन बनाने की तैयारी हो रही है।

(ख) भारत में शिक्षा पर व्यय बढ़ाने की मांग बुद्धिजीवियो का श्रम शोषण का एक तरीका है। तीन प्रकार के लोग हं (1) अशिक्षित (2) शिक्षार्थी (3) शिक्षित। शिक्षा का व्यय अशिक्षित भी वहन करे यह पूरी तरह अन्यायपूर्ण है। मौलिक शिक्षा के अतिरिक्त सम्पूर्ण शिक्षा पर एक पैसा भी व्यय तब तक रोक देना चाहिये जब तक पहले प्रकार के लोगों पर टैक्स पूरी तरह समाप्त न हो जावे।

19. कर प्रणाली, वन नीति

1. मुद्रा स्फीति का अर्थ होता है रूपये की घटती कय शक्ति और इसका एक ही प्रभाव होता है मुद्रा अर्थात् नगद रूपया पर अप्रत्यक्ष करारोपण।
2. मुद्रा स्फीति का कोई प्रभाव उन लोगों पर नहीं होता जिनके पास रूपया नगद या बैंक में जमा नहीं है।
3. मुद्रा स्फीति और महंगाई अलग–अलग है। दुर्भाग्य से भारत में इसे एक माना जाता है। मुद्रा स्फीति का सामान्य लोगों पर कोई प्रभाव नहीं होता जबकि महंगाई का होता है। महंगाई का अर्थ होता है व्यक्ति की कय शक्ति की तुलना में वस्तुओं की मूल्य वृद्धि का अधिक होना।

4. महगाई किसी वस्तु विशेष में आती है न कि सब में। यदि सब का मूल्य बढ़ा तो वह मुदा स्फीति है न कि महंगाई।

5. मुद्रा यदि सोने से बदलकर चॉदी और चांदी से बदलकर रांगा में मानने लगे तो महंगाई नहीं कह सकते।

6. भारत में– 1. बहुत महंगी हुई है सोना, चांदी, जमीन।

2. कुछ महंगी है सरकारी नौकरी।

3. स्थिर हैं दालें, श्रम, कृत्रिम ऊर्जा।

4. सस्ती हुई है– अनाज, कपडा व अन्य सामान्य उपयोग की चीजें।

5. बहुत सस्ती हुई हैं– आवागमन, कागज, डाक सेवाएॅ, रेडियों, घड़ी, फाउन्टेनपेन, टेलीफोन तथा इलेक्ट्रानिक्स की वस्तुएॅ।

7. आर्थिक असमानता बहुत तेजी से बढ़ी हैं। अमीर बहुत तेज गति से बढ़ा है तथा गरीब मंथर गति से। यह असमानता निरन्तर बढ़ रही है।

8. आर्थिक असमानता की वृद्धि असंतोष का विशेष कारण है।

9. महंगाई का हल्ला– 1. सम्पन्न लोग आर्थिक असमानता पर से समाज का ध्यान हटाने के लिये कराते हैं।

2. राजनेता सत्ता परिवर्तन के खेल में करते हैं।

3. शासकीय कर्मचारी अधिक से अधिक सुविधाओं के लिय करते हैं। जबकि महंगाई पूरी तरह काल्पनिक है।

10. पिछले 60 वर्षो में भूमि के मूल्यों में अनियंत्रित वृद्धि हुई है। भूमि के प्रति सामान्यतया आकर्षण भी बढ़ा है।

11. भूमि का लगान आज भी पहले जितना ही है जबकि लगान शुरू होने वाले वर्ष की अपेक्षा रूपय का मूल्य सिर्फ दो पैसे बचा है।

12. भूमि का लगान कम होना उन व्यवसायी भूपतियों के लिये बहुत लाभकारी है जो मूल्य वृद्धि के लाभ के लिये जमीन खरीदकर रखते है।

13. भूमि का लगान पचास गुना कर देना ही भूमि की समस्या का सर्वश्रेष्ठ समाधान है। इससे भूमि के मूल्य घटेंगे। भूमि व्यवसाइयों से निकलकर किसानों के पास आयेगी तथा भूमि के प्रति आकर्षण समाप्त हो जायेगा।

14. यदि भूमि सहित सम्पूर्ण सम्पत्ति पर दो प्रतिशत कर लगा दिया जाये तो भूमि पर लगान की आवश्यकता ही नहीं पड़ेगी।

15. पर्यावरण प्रदूषण पर नियंत्रण हेतु वन लगाना ही पर्याप्त नहीं। प्रदूषण फैलाने पर भी नियंत्रण आवश्यक है।

16. एक ट्रैक्टर की नली से निकलने वाले आठ घण्टे के धुएॅ को साफ करने में कई सौ पेड़ों की आवश्यकता होती है।

17. डीजल, पेट्रोल आदि के प्रयोग में कमी पर्यावरण सुरक्षा की दृष्टि से उचित कदम है।

18. औद्योगीकरण को संतुलित करना पर्यावरण प्रदूषण निवारण का श्रेष्ठतम् उपाय है।

19. मोटर साईकिल के साईलेन्सर से निकलने वाला धुऑ जो प्रदूषण फैलाता है उसका प्रभाव दूर करने के लिये रोटी, कपड़ा, दवा पर टैक्स लगाया जाता है।

20. पिछले पचास वर्षो में आबादी में तीन गुनी परन्तु आवागमन में पचास गुनी वृद्धि हुई है क्योंकि सामान्यतया कय शक्ति बढ़ी परन्तु आवागमन सस्ता हुआ है।

21. बढ़ती आबादी एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या हैं इसे भारत की सभी समस्याओं का कारण बताना भ्रम फैलाना है ।

22. यदि वन उत्पादन को पूरी तरह कर मुक्त कर दिया जाये तो भारत में वनों का क्षेत्रफल अशासकीय क्षेत्र में स्वतः ही तेजी से बढ़ जायेगा।

23. किसी भी सरकार का यह स्वभाव होता है कि वह जिसे लाभ पहुॅचाना चाहती है उसे प्रत्यक्ष कर और अप्रत्यक्ष रियायत देती है और जिसे धोखा देना हो उसे प्रत्यक्ष रियायत और अप्रत्यक्ष कर लेती है। भारत में भी धनवानों को प्रत्यक्ष कर और अप्रत्यक्ष कर रियायत दी जाती है दूसरी ओर गरीबों को प्रत्यक्ष रियायत और अप्रत्यक्ष कर लिये जाते है। इसे पूरी तरह पलटकर कृत्रिम ऊर्जा पर भारी कर लगाने तथा अन्य उपभोक्ता वस्तुओं का कर समाप्त कर देना चाहिये।

24. वनों के संबंध में भारत वन सुरक्षा की नीति पर चल रहा है जबकि उसे वन विस्तार की नीति पर चलना चाहिये। पर्यावरण की दृष्टि से वन विस्तार आवश्यक है जो वन सुरक्षा की नीतियों को बदल बिना संभव नहीं। वर्तमान शौकिया पर्यावरण प्रेमियों की नासमझी भी वन विस्तार में बाधक है।

25. कृत्रिम ऊर्जा पर पर्यावरण कर लगाकर तथा व्यक्तिगत वनों पर प्रतिवर्ष की पर्यावरण सब्सीडी वन विस्तार में सहायक हो सकता है।

26. भारत में यह धारणा फैलाई गई है कि गॉवों की अपेक्षा शहर अधिक टैक्स देते हैं जो पूरी तरह असत्य है। सच्चाई यह है कि गांव शहरों की अपेक्षा दस गुना तक अधिक राजस्व देते हैं। किन्तु गांवों के उत्पादन पर भी शहरों में कर लिया जाता है और उपभोग की वस्तुओं पर भी। यही गांवों से इकट्ठा किया गया कर शहरों के रेकार्ड में बताकर अनुपात बिगाड़ा जाता है।

20 कश्मीर समस्या

1. भारत और पाकिस्तान की प्रगति का बहुत बड़ा हिस्सा कश्मीर समस्या की बलि चढ़ जाता है।
2. स्वतंत्रता के पूर्व अंग्रेजों ने गृह युद्ध के उद्दश्य से मुसलमानों और हिन्दुओं के दो अलग–अलग गुट खड़े करक उन्हें शह देनी शुरू कर दी थी। जब गांधीजी के नेतृत्व में आम हिन्दू और मुसलमान स्वदेशी की लड़ाई में एकजुट था तब ये लोग हिन्दू और मुसलमानों में नफरत के बीज बो रहे थे। वीर सावरकार को छोड़कर इनमें से किसी की उल्लेखनीय भूमिका स्वतंत्रता संघर्ष में नहीं रही।

3. स्वतत्रता के अतिम काल तक मुसलमानों का बडा हिस्सा अपने साम्प्रदायिक नेतृत्व के पीछे इकट्ठा हो गया परन्तु हिन्दू नही हुआ। अतः भारत स्वतंत्र हो गया। यदि हिन्दू भी इकट्ठा हो जाता तो भारत गृह युद्ध म फंस जाता और अंग्रेजो की चाल सफल हा जाती।
4. भारत का बंटवारा दो भाईया के बीच का बंटवारा नही था बल्कि एक संयुक्त परिवार से एक भाई का अलग हो जाना था।

5. भारत के आम मुसलमानों से भारत या पाकिस्तान में से एक चुनने का जनमत संग्रह नही हुआ बल्कि राजाओं से पूछा गया कि वे भारत मे रहना चाहत ह या पाकिस्तान में अथवा स्वतंत्र।
6. निजाम हैदराबाद और कश्मीर स्वतंत्र रियासतें थी। स्वतंत्रता के बाद तक कश्मीर के राजा हिन्दू और बहुमत मुसलमान था, जबकि हैदराबाद का ठीक उल्टा। हैदराबाद पर भारत ने आक्रमण किया और कश्मीर पर पाकिस्तान ने। कश्मीरी मुस्लिम बहुमत हिन्दू राजा के पास साथ में था। अतः विलय के बाद भी जनमत संग्रह स्वीकार कर लिया गया।
7. इसी समय साम्प्रदायिक हिन्दुओं ने महात्मा गांधी की हत्या कर दी जिससे कश्मीर सहित भारत के मुसलमानों में शंका पैदा हो गई। कांग्रेस ने साम्प्रदायिक हिन्दुओं को दबाने के स्थान पर कट्टरवादी मुसलमानों को प्रोत्साहित करने की गलत नीति अपनाई। इससे हिन्दू मुसलमानों के बीच तो संतुलन बना परन्तु कट्टरवादी तत्वों के हौसले बढ़ते चले गये। कांग्रेस पार्टी निरंतर मुसलमानों को एक पक्षीय प्रश्रय देती रही और कट्टरवादी हिन्दुओं को प्रतिकिया जागृत करने का सुअवसर मिलता रहा।
8. कश्मीर का भारत में विलय कुछ शर्तो के आधार पर हुआ था । दूसरी ओर जनमत संग्रह की स्वीकृति के बाद हमारा पक्ष कश्मीर की जनता की इच्छा पर निर्भर था। ऐसे समय पर श्यामा प्रसाद मुखर्जी का विलय की शर्तो को समाप्त करने का आह्वान करते हुए कश्मीर में प्रवेश करना, गिरफ्तारी देना तथा शहीद हो जाना कितना उचित था, कितना प्रासंगिक और भारत की समस्याओं में कितना प्राथमिक यह मैं आज तक नहीं समझ सका। मेरे विचार में तो कश्मीर समस्या का उलझाव श्री मुखर्जी की अनावश्यक जल्दबाजी से भी जुड़ा हो सकता है।
9. कश्मीर समस्या भारत और पाकिस्तान की राजनैतिक सत्ता के खेल का मैदान है जब चाहा तब खेल लिया और जब चाहा तब शिमला में बैठकर आराम कर लिया। कश्मीर समस्या का समाधान करने में भारत और पाकिस्तान की सरकारों की रूचि नहीं है। दोनों देशों की जनता को चाहिये कि वह अपने–अपने देशों की सरकारों को कश्मीर समस्या का कोई हल निकालने के लिये मजबूर कर दें।
10. अखंड भारत का नारा सिर्फ शब्द जाल है। यदि एसा होने की सम्भावना बनने लगे तो भा0ज0पा0 सबसे अधिक विरोध करेगी क्योंकि भारत में मुसलमानों का वोट (मत) बारह प्रतिशत से बढ़कर बीस प्रतिशत हो जायेगा।

21. दान, चन्दा, भीख

1. दान– "1. स्वेच्छा से तथा अपनी क्षमता अनुसार 2. लेने वाले का पूरा अधिकार 3. बिना मांगे दिया जाना" को दान कहते ह। दान देन के बाद वापस नहीं लिया जा सकता।
2. चन्दा–"1. मिलकर इकट्ठा करने 2. देने वाल का पूरा अधिकार 3. आपसी विचार विमर्श के आधार पर"। देने का चन्दा कहते ह। चन्दा का पूरा हिसाब देने वाला पूछ सकता है तथा परिस्थिति अनुसार वापस भी ले सकता है।
3. भीख– "1. स्वेच्छा से तथा लेने वाले की आवश्यकता को देखते हुये। 2. लेने वाले का पूरा अधिकार"। 3. मांगने पर दिये जाने को भीख कहते ह। भीख का न तो हिसाब लिया जा सकता है न वापस लिया जा सकता है।
4. 1. चंदा एक ऐसा धंधा है जिसमें घाटा कभी होता ही नहीं यदि आर्थिक लाभ न भी हो तो सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़नी तो निश्चित है।

   2. अनियंत्रित हड़तालें और अनियंत्रित चन्दे के माध्यम से ही समाज विरोधी तत्व सामाजिक कार्यो की ओर लगातार लेकर शक्तिशाली होते जाते हैं। ऐसी हड़तालों और चन्दों को समाज में नियंत्रित करना चाहिये।

22. भ्रष्टाचार

1. भारत में भष्टाचार उपर से नीचे तक फैल चुका है। राजनेताओं में शत–प्रतिशत, व्यापारियों में 98 प्रतिशत, न्यायपालिका में 95 प्रतिशत, शिक्षा में 90 प्रतिशत के करीब है।
2. वर्तमान समय में जनता एक सौ रूपये टैक्स देती है तो शासन को पंद्रह रूपये पहुॅचता है। शासन 15 रूपये वापस करता है तो सवा दो रूपये जनता तक पहुॅचता है। अर्थात् सवा दो रूपये की राहत देने के लिए सरकार एक सौ रूपये वसूल करती है।
3. कानून और भ्रष्टाचार एक दूसरे के पूरक है। कानून भ्रष्टाचार को बढ़ाते हैं और भ्रष्टाचार कानूनों में वृद्धि करता है।
4. व्यक्ति के अधिकार (त्पहीज) जब किसी अन्य को हस्तांतरित होते हैं तो वे शक्ति (च्वूमत) बन जाते हैं। यही कानून बनता है। यहीं से भ्रष्टाचार के अवसरों का जन्म होता है।
5. व्यवस्था में च्वूमत (कानूनों) की मात्रा ही भ्रष्टाचार की मात्रा होती है।
6. भारत की वर्तमान अर्थनीति भ्रष्टाचार को कम से कम करती जायेगी। अधिकतम निजीकरण हमारी प्राथमिकता होनी चाहिये।
7. भारत में सत्ता के विकेन्द्रीयकरण का वर्तमान प्रयास भी भ्रष्टाचार कम करने में सहायक हागा।
8. पारदर्शिता, विकेन्द्रीयकरण तथा कानूनों का कम करना भष्टाचार दूर करने का सरल उपाय है। राष्ट्रीकरण भो पूरी तरह समाप्त कर देना चाहिये।
9. अपराध नियंत्रण के दायित्व के अतिरिक्त अन्य कार्यो की समीक्षा करके परिस्थिति अनुसार शासन ऐसे कर्तव्यों से मुक्त हो जाय। शिक्षा, चिकित्सा, आवागमन, वस्तु कय–विकय आदि अधिकांश कार्य शासकीय हस्तक्षेप के बिना स्थानीय स्तर पर होना भी सम्भव है। इससे 90 प्रतिशत तक विभागों की समाप्ति सम्भव है। इसी हिसाब से भ्रष्टाचार भी समाप्त होता जायेगा।

23. नक्सलवाद

1. वर्तमान असफल होती जा रही व्यवस्था के विरूद्ध हथियार उठा लेने का नाम नक्सलवाद है।
2. नक्सलवाद साम्यवाद का अतिवादी तथा अलोकतन्त्रीय स्वरूप माना जाता है। यद्यपि अनेक अपराधी तत्व भी इनमें प्रवेश कर रहे हैं।
3. यदि व्यवस्था में आमूल परिवर्तन नहीं होगा तथा लोगों को न्याय नहीं मिला तो लोग हथियार उठा लेंगे। ऐसे लोगों को नक्सलवादी कहकर गोली मारने से भी ऐसी हिंसक कान्ति नहीं दबेगी।

4. नक्सलवादियों के पास वर्तमान व्यवस्था को शक्ति से हटाने की योजना तो है किन्तु भविष्य के लिये किसी सम्भावित व्यवस्था का प्रारूप नहीं।
5. व्यवस्था परिवर्तन के उद्दश्य से हिंसक कान्ति का नाम है नक्सलवाद तथा अहिंसक कान्ति का नाम है लोक स्वराज्य। वर्तमान समय में नक्सलवाद भटक कर सत्ता परिवर्तन बन गया है।
6. वर्तमान व्यवस्था के स्थान पर नई व्यवस्था का प्रारूप बनाकर उसे अहिंसक तथा प्रजातांत्रिक तरीके से स्थापित करने का प्रयास ही नक्सलवाद का समाधान है। लोक स्वराज्य मंच ने प्रारूप बना लिया है। अब जनमत जागरण के प्रयास हो रहे हैं।
7. नक्सलवाद और डकैती लूट में अंतर स्पष्ट है। डकैती पूरी तरह समाज विरोधी कार्य है और नक्सलवाद व्यवस्था (सरकार) विरोधी।

24. भावना, बुद्धि, विवेक, उपदेश, प्रवचन, भाषण, शिक्षा

1. मनुष्य के कार्यो में भावना और विवेक का समन्वय अनिवार्य है। भावना त्याग का प्रतीक है और विवेक ज्ञान का।
2. भावना की प्रधानता संतुलित निर्णय में बाधक है। भावना प्रधान व्यक्ति संतुलित निर्णय कर ही नहीं सकता।
3. स्वार्थी तत्व लगातार समाज में भावनाओं का विस्तार चाहते हैं क्योंकि विवेक उनके स्वार्थ में बाधक होता है। धर्म, जाति, भाषा, राष्ट्र, लिंग, उम्र, आदि भावनात्मक मुद्दे इनके हथियार होते हैं। अधिकांश सामाजिक या धार्मिक संस्थाएँ भावना विस्तार में निरन्तर लगी हुई हैं।
4. अच्छी भावनाएं व्यक्ति को शरीफ बनाती है। विवेक व्यक्ति को समझदार बनाता है।
5. शराफत धूर्तो का भोजन है। धूर्तता शराफत के ही कंधो पर सवार होकर आगे बढ़ती है।
6. शराफत का अर्थ होता है अपने कर्तव्य की चिन्ता अधिकार की नहीं। समझदारी का अर्थ होता है अपने कर्तव्य और अधिकारों की समान चिन्ता। धूर्तता का अर्थ है अधिकारों की चिन्ता, कर्तव्य की नहीं।
7. जब समाज व्यवस्था विश्वसनीय हो तब शराफत उचित है। जब समाज व्यवस्था विश्वसनीय न हो तब शराफत धूर्तता की पूरक है।
8. वर्तमान समय में शराफत छोड़कर समझदारी की दिशा उचित है।
9. उपदेश, गूढ़, तात्विक, कथनी और चरित्र की एकरूपता, मस्तिष्क ग्राहय तथा अपने विचार होते हैं।
10. प्रवचन कलात्मक, कथनी और चरित्र की एकरूपता, हृदय ग्राहय तथा अपने विचार प्रधान होते हैं।
11. भाषण कलात्मक, हृदय ग्राहय तथा अपने विचार प्रधान होते हैं किन्तु चरित्र आवश्यक नहीं।
12. शिक्षाः— तत्व और कला का समन्वय, हृदय और मस्तिष्क दोनों का समन्वय होता है किन्तु चरित्र और अपने विचार आवश्यक नहीं।
13. शरीफ आदमी निरभिमानी होता है। समझदार आदमी स्वाभिमानी होता है। धूर्त प्रत्यक्ष रूप में निरभिमानी और परोक्ष रूप में अभिमानी होता है।
14. जब तर्क से कोई बात सिद्ध नहीं हो पाती तब भावनात्मक नारे या प्रचार का सहारा लिया जाता है।
15. जब कोई व्यक्ति तर्क से अपनी बात नहीं समझा पाता तब अपने कथन के साथ किसो महापुरूष का नाम जोड़ देता है।

25. संगठन, हड़ताल, चक्काजाम

1. भारत में संगठन में शक्ति को स्वीकार करके संगठन बनाने की होड़ लगी है।
2. सभी संगठन अधिक शक्तिशाली संगठनो से सुरक्षा तथा असंगठितों के शोषण की योजनाओं में लगे रहते हैं।
3. संगठित वर्गो और असंगठित व्यक्तियों के बीच की दूरी लगातार बढ़ रही हैं और संगठन बनाकर इस दूरी को कम नहीं किया जा सकता क्योंकि ये संगठन तो स्वयं ही टकराव, घृणा, द्वेष पर जीवित है। अतः इनकी संगठन क्षमता और उपयोगिता को चुनौती देनी होगी।
4. धर्म, जाति, भाषा, लिंग, राष्ट्र, क्षेत्र, उम्र, आर्थिक स्थिति और उत्पादन उपभोग संगठन के असामाजिक आधार है। इन्हें कमजोर करना होगा। प्रवृत्ति ही संगठन का उपयुक्त आधार है। सभी अच्छे लोगों को समाज विरोधी तत्वों के विरूद्ध संगठित हो जाना चाहिये। वर्तमान संगठन ऐसे संगठन में बाधक है।
5. अधिकांश हड़तालें संगठित समूहों द्वारा अधिकाधिक अधिकार प्राप्ति का पर्याय होती है तथा अन्य असगठितों के शोषण का माध्यम है।
6. अधिकांश हड़तालें या चक्का जाम व्यवस्था को ब्लैक मेल करने के उद्दश्य से होते हैं। अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिये ये दूसरों को कष्ट देते हैं।
7. जब अपने अधिकारों की प्राप्ति का कोई भी प्रजातांत्रिक मार्ग शेष न हो तभी हड़ताल चक्का जाम या आन्दोलन का मार्ग अपनाया जा सकता है। गुलाम भारत में यह उचित था और प्रजातंत्र भारत में अनावश्यक।
8. अधिकांश आन्दोलनों में समाज विराधी तत्वों का वर्चस्व हो रहा है।
9. पुराने समय में राजनीतिक दल या सामाजिक संस्थाएं समस्याओं के समाधान के लिए हड़ताल या आन्दोलन का सहारा लेती थी। अब हड़तालों या आन्दोलनो के लिए समस्याएं खोजी जाती है।
10. स्वतंत्रता के काल में जन जागृति के उद्दश्य स सत्याग्रह होता था तथा अनशन का उपयोग अपने लोगों के मार्ग परिवर्तन के लिए किया जाता था। वर्तमान समय में अनशन भी अपना अर्थ भूलकर जन जागृति क लिए करने की परम्परा हो गई है।

26. सम्प्रदाय और धर्म

1. किसी व्यक्ति के हित में किये जाने योग्य निःस्वार्थ कार्य को धर्म कहते है।
2. धर्म का उपासना से कोई संबंध नहीं है। धर्म के दस लक्षणों में भी ईश्वर या पूजा शामिल नहीं है।
3. किसी उपासना पद्धति के आधार पर बने संगठन को सम्प्रदाय कहते ह।
4. धर्म में गुण प्रधान होता है, संख्या गौण। सम्प्रदाय में संख्या प्रमुख होती है, गुण गौण।
5. हिन्दू विचार तर्क से बढ़ा है ईसाई प्रेम और सेवा से तथा इस्लाम संगठन शक्ति से।

6. कुछ कट्टरवादी हिन्दू संगठनों को यदि अलग कर दें तो हिन्दू मूल रूप से कट्टर नहीं होता, ईसाइयत में कैथोलिकों का वर्तमान स्वरूप कुछ कट्टरवाद की तरफ झुका हुआ है। मुसलमान दुनिया में धार्मिक मामलों में सर्वाधिक असहिष्णु और कट्टर हाता है।
7. शक्ति प्रयोग और अहिंसा के प्रयोग का परिस्थिति अनुसार निर्णय करना चाहिए न कि सिद्धांत अनुसार।
8. हिन्दू धर्म में व्याप्त एक पक्षीय हिंसा ने बुद्ध और जैन का पैदा किया तथा बुद्ध और जैन की एक पक्षीय अहिंसा ने भारत को गुलामी की ओर धकेल दिया। इसी तरह यहुदियों की एक पक्षीय हिंसा ने ईसाइयत को जन्म दिया और ईसाइयों की एक पक्षीय अहिंसा से इस्लाम पैदा हुआ। इस्लाम की एक पक्षीय हिंसा के परिणाम शीघ्र ही आने की सम्भावना है।
9. गांधीजी की अहिंसा परिस्थितियों क कारण सफल हुई न कि सिद्धान्त से। यदि ब्रिटिश शासन के स्थान पर मुस्लिम या साम्यवादी देशों की गुलामी होती तो गाधीजी की अहिंसा सफल नहीं होती।
10. हिंसा का मार्ग अंतिम विकल्प है न कि प्रथम। स्वतंत्रता संघर्ष में गांधीजी का निर्णय उचित था और हिंसा के पक्षधारों का गलत। गांधी जी अहिंसा को कायरता के विरूद्ध शस्त्र के समान उपयोग करते थे किन्तु वर्तमान में अहिंसा के पक्षधार अपनी कायरता को ढकने के लिये अहिंसा को ढाल के रूप में उपयोग करते हैं।
11. वर्तमान समय में किसी भी नागरिक द्वारा किसी भी परिस्थिति में हिंसा का समर्थन या हिंसा का प्रयोग गलत है।
12. साम्प्रदायिक संगठन एक दूसरे के पूरक होते हैं। हिन्दू साम्प्रदायिकता मुस्लिम साम्प्रदायिकता को तथा मुस्लिम साम्प्रदायिकता हिन्दू साम्प्रदायिकता को बढ़ाती है।
13. भारत में धर्म निरपेक्ष व्यक्तियां की विश्वसनीयता संदिग्ध रही है। अधिकांश धर्म निरपेक्ष, व्यक्तियों, संगठनों ने हिन्दू साम्प्रदायिकता का विरोध किया किन्तु मुस्लिम साम्प्रदायिकता का समर्थन या मौन। आज असम या बंगाल में मुस्लिम आबादी बढ़ाने का षड़यंत्र एक नये विभाजन की स्थिति का भय पैदा करता है। ये धर्म निरपेक्ष इसके प्रति मौन रहते हैं।
14. अल्प संख्यक बहुसंख्यक का विचार मूल रूप में घातक है। वास्तव में शरीफ लोगों के समक्ष अल्प संख्यक हाने का खतरा उपस्थित हो गया है।
15. साम्प्रदायिक हिन्दू और साम्प्रदायिक मुसलमान दो विपरीत ध्रुवों पर खड़े होकर एक दूसर पर आकमण करते हैं। बीच में शान्ति प्रिय लोग रहते हैं जो इनके आकमण में मारे जाते हं।
16. किसी भी साम्प्रदायिक दंगे में न कट्टरवादी हिन्दू मरता है न ही कट्टरवादी मुसलमान। सारा नुकसान हम लोगों का ही होता है।
17. धार्मिक आधार पर चार सम्प्रदाय होते हैं।
1 जा मान्यता में कट्टरवादी हैं तथा आचरण में भी कट्टरवादी हैं। (दूसरों के मूल अधिकारों का हनन करते है।)
2 जो मान्यता में शांतिप्रिय हैं और आचरण में कट्टरवादी।
3 जो मान्यता में कट्टरवादी हैं परन्तु आचरण में शांतिप्रिय।
4 जो मान्यता तथा आचरण दोनों में शान्तिप्रिय हैं। कट्टरवादी मुसलमान पहले श्रेणी में, कट्टरवादी हिन्दू दूसरी श्रेणी में, शांतिप्रिय मुसलमान तीसरी श्रेणी में और शांतिप्रिय हिन्दू चौथी श्रेणी में आते हैं। हमें पहली श्रेणी को तत्काल नष्ट कर देना चाहिये तथा दूसरी को भी नियंत्रित करने का प्रयास करना चाहिये तीसरी श्रेणी का हृदय परिवर्तन और चौथी श्रेणी का अनुकरण उपयुक्त मार्ग है।

18 वर्तमान स्थितियों में पहली और दूसरी श्रेणी के विरूद्ध तीसरी और चौथी श्रेणी को एकजुट हो जाना चाहिये।
19 कट्टरवादी हिन्दू और कट्टरवादी मुसलमान ऐसा ध्रुवीकरण पसन्द नहीं करेंगे।
20 धार्मिक एकीकरण किसी भी सामाजिक समस्या का समाधान नहीं है। भारत के सब लोग हिन्दू, मुसलमान या इसाई होकर किसी भी एक धर्म के हो जावें तब भी चोरी, डकैती बलात्कार, आतंकवाद, मिलावट आदि में से किसी समस्या का कोई समाधान सम्भव नहीं है।
21 धर्म संकट में हैं धर्म की रक्षा करना हमारा प्रथम कर्तव्य हैं। हिन्दू, मुसलमान, इसाई, सिक्ख सभी धर्म प्रेमियों को एकजुट होकर अधर्म के विरूद्ध संघर्ष शुरू कर देना चाहिये।
22 यदि भगवान राम का पृथ्वी पर अवतरण हो जाये तो वे सर्वप्रथम आसुरी सशक्तियों से संघर्ष शुरू कर देंगे चाहे ऐसे तत्व किसी भी धर्म (सम्प्रदाय) के हों।
23 धर्म की व्यवस्थाएँ कुछ लोगों के जीवनयापन के साथ जुड़ गई हैं। अतः धर्म की अपने अनुकूल व्याख्या करना उनकी मजबूरी भी है।
24 रूढ़िवादिता हमारे स्वतंत्र चिन्तन को एक पक्षीय प्रभावित करती है। चाहे वह रूढ़िवादी धार्मिक हो या राजनीतिक।
25 जब समाज पर समाज विरोधी तत्वों का खतरा मंडरा रहा हो, तब मंदिर, मस्जिद, आरक्षण अथवा राष्ट्र भाषा जैसे मुद्दे उठाना प्राथमिकता की दृष्टि से गलत कार्य है।
26 बनारस के मंदिर को देखकर यह आभास होता है कि मुसलमानों ने अनेक मंदिरा को तोड़कर मस्जिदें बनवाई होगी।
27 अयोध्या का स्थल पूर्व मे मंदिर तो हो सकता है किन्तु राम जन्म स्थल होने के कोई निश्चित प्रमाण नहीं। वहां राम की मूर्ति का निकलना प्रायोजित घटना है।
28 उक्त स्थल को रामजन्म न हा तो भी स्वीकार कर लेना चाहिये।
29 उक्त स्थल का स्वामित्व और व्यवस्था स्थानीय नगरपालिका को इन शर्तो के साथ दे देनी चाहिये–
1 उक्त स्थल पर भव्य अन्तर्राष्ट्रीय राम स्मारक बनेगा।
2 उक्त स्थल पर राम की मूर्ति असत्य रूपी रावण पर विजय की प्रतीक बनेगी।
3 उक्त स्थल पर कोई पूजा नहीं हो सकती।
4 मंदिर और मस्जिद उक्त स्थल से कुछ दूर हटकर बनाए जा सकते हैं।
5 उक्त स्थल का प्रयोग राम के जीवन से संबंधित अनुसंधान कार्य के लिये ही सीमित होगा।
6 किसी तरह का विवाद होने पर न्यायालय का निर्णय अंतिम होगा।

30. रामजन्म भूमि विवाद का एक और हल हो सकता है कि दोनों पक्षों की सहमति से लाट्री निकालकर एक पक्ष को नीचे और दूसरे पक्ष को ऊपर बनाने की अनुमति दी जावे जो ऐसी शर्तों से बन्धी हो कि दोनों पक्ष मान जावें।

31. धर्म और राजनीति एक दूसरे के पूरक होते हैं। धर्म हृदय परिवर्तन का कार्य करता है और राजनीति व्यक्ति को उच्श्रृंखलता पर अंकुश लगाती है।
32. धर्म और विज्ञान को एक दूसरे के निकट होना चाहिये। विज्ञान निष्कर्ष निकालता है और धर्म उस पर आचरण हेतु प्रेरणा देता है।
33. धर्म और विज्ञान को बढ़ती दूरी ही रूढ़िवाद का आधार ह वर्तमान में यह दूरी बढ़ रही है।
34. आध्यात्म, धर्म, समाज और राज्य के सतुलित समन्वय से व्यवस्था बनती है। किसी एक का कमजोर या मजबत् होना अव्यवस्था को बढ़ाता है।
35. (क) आध्यात्म व्यक्ति को आत्म केन्द्रित, चिन्तन प्रधान।
(ख) धर्म द्सरों के प्रति कर्तव्य की प्रेरणा।
(ग) समाज अनुशासित।
(घ) राज्य शासित, नियंत्रित करता है।
36. वर्तमान समय मे राज्य ने समाज को निगल लिया है। राज्य निरंतर मजबूत और समाज निरंतर कमजोर हो रहा है। राज्य स्वय को समाज घोषित करने लगा है।
37. जब भी समाज पर ऐसा संकट आता है तब धर्म और आध्यात्म समाज को सहायता के लिय आगे आते हैं। रामायण काल में भी ऋषियों ने राम को शस्त्र भी दिये शस्त्र चलाने की ट्रेनिंग भी। ऐसे समय में सत्य और धर्म की परिभाषा भी बदल जाया करती है। रामायण काल में बालि वध या मेघनाद यज्ञ विध्वंस में धर्म और कर्तव्य की परिभाषा बदल गई तो महाभारत काल में भी कई जगह सत्य को व्यावहारिक स्वरूप देना आवश्यक समझा गया।
38. वर्तमान समय में भी आध्यात्म और धर्म को व्यावहारिक परिभाषाओं के साथ समाज की सुरक्षा में आगे आना चाहिये।

27. स्वदेशी

1. दुनिया में चार प्रकार की व्यवस्थाएँ हैं (क) व्यक्ति प्रधान, (ख) धर्म प्रधान, (ग) राज्य प्रधान, (घ) समाज प्रधान। लोकतांत्रिक देशों की व्यवस्था में व्यक्ति प्रधान है। इस्लामी देशों में धर्म महत्वपूर्ण हैं। साम्यवादी देशों में राज्य शक्तिशाली है। भारत में सबका घालमेल है। समाज किसी व्यवस्था में प्रमुख नहीं।
2. भारत के राजनैतिक संवैधानिक स्वरूप में समाज प्रमुख होना चाहिये, धर्म, राज्य, और व्यक्ति सहायक।
3. भारत के राजनैतिक संवैधानिक स्वरूप निर्माण में लगे अधिकांश व्यक्ति या संगठन बिकाऊ है। कई व्यक्ति या संगठन पूँजीवादी देशों से धन से लेकर बाल विवाह, बालश्रम, बढ़ती आबादी, पर्यावरण प्रदूषण, नशा वृद्धि जैसी समस्याओं को ही समाज की सबसे बड़ी समस्या सिद्ध करते हैं तो कुछ अन्य साम्यवादी देशों से धन ले लेकर महंगाई, बेरोजगारी, आर्थिक असमानता, सामाजिक असमानता, भूख, गरीबी जैसी समस्याओं को। कुछ अन्य लोग इस्लामिक देशों से धन ले लकर उनकी ही चापलूसी करते रहते है। ये भारत में अल्पसंख्यक सुरक्षा को ही सबसे बड़ी जरूरत बताते रहते हैं। भारत की सरकारें विदेशों से धन ले लेकर राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय नीतियों में फेर बदल करती है। राजनैतिक दल भी विदेशों से गुप्त धन लकर उनकी चापलूसी करते रहते हैं और कई राजनैतिक व्यक्ति भी विदेशी धन लेकर उनकी दलाली करते हैं। अब तो भारत की अनेक सामाजिक संस्थाएँ भी विदेशों से धन लेकर असत्य या कम महत्व की समस्याओं को आगे करती हैं और महत्वपूर्ण समस्याओं को पीछे कर देती हैं। यह पहचानना ही कठिन है कि कौन व्यक्ति, दल या संस्था विदेशी दलाल है और कौन नहीं।
4. भारत में ग्यारह समस्याएँ प्रमुख हैं (1)चोरी, डकैती, लूट, (2)बलात्कार, (3) मिलावट, कमतौल (4)जालसाजी, धोखा,(5)हिंसा,आतंक(6)भ्रष्टाचार(7)चरित्र पतन, (8)साम्प्रदायिकता(9)जातीय कटुता(10)आर्थिक,असमानता(11)श्रम शोषण। ये समस्याएँ लगातार बढ़ रही हैं तथा भारत के किसी भी राजनैतिक दल के पास इनमें से किसी एक का भी न समाधान है न ठोस योजना।
5. ग्यारह समस्याओं में से प्रथम पांच शासन की निष्क्रियता के परिणाम हैं और दूसरी छः शासन की अति सक्रियता के। भारत के प्रमुख नीति निर्धारक पूँजीवादी, साम्यवादी या इस्लामिक देशों से गुप्त धन ले लेकर पहली पांच समस्याओं को कम और दूसरी छः को अधिक महत्वपूर्ण प्रमाणित करते रहते हैं। ऐसा महसूस होता है कि भारत का हर महत्वपूर्ण विचार बिकाऊ हो गया है।
6. भारत की सभी समस्याओं के समाधान के लिये एक स्वदेशी संविधान की आवश्यकता है जो स्वदेशी व्यवस्था बना सके। दुर्भाग्य से हमारे अनेक विद्वान साबुन, वस्त्र और स्वदेशी शीतल पेय को ही स्वदेशी का प्रतीक प्रमाणित करने पर अपनी सारी शक्ति लगा रहे हैं। स्वदेशी आंदोलन स्वदेशी शब्द का अर्थ ही नहीं समझता है।
7. भारत में तत्काल राजनैतिक समाधान कांग्रेस और भाजपा का मिलकर गठबंधन हो सकता है। संघ और सर्वोदय मिलकर ऐसा मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं।
8. भारत में वर्तमान समय में एक भी ऐसा राजनैतिक सामाजिक आंदोलन नहीं जो राज्य के अधिकारों की समोक्षा की चिन्ता करे। सभी आंदोलन राज्य के गलत आदेशों के विरोध तक सीमित हैं।
9. गांधी, विनोबा, जयप्रकाश, ने अपना सम्पूर्ण जीवन राज्य के अधिकारों की समीक्षा में लगा दिया। गांधीवादी, गांधी–विनोबा–जयप्रकाश के नाम पर उनकी विरासत के तो मालिक हैं किन्तु राज्य के अधिकारों की चिन्ता न करके आदेशों की समीक्षा और विरोध तक सीमित हो गये हैं।
10. वर्तमान सभी समस्याओं का समाधान एक ऐसे आंदोलन से संभव है।
(क) जो राज्य के आदेशों के विरूद्ध नहीं, अधिकारों के विरूद्ध आंदोलन करे।
(ख) विदेशी या भारतीय पंजीपतियां के गुप्त धन से संचालित न हो।
(ग) स्वदेशी को उसकी गलत परिभाषा से निकालकर स्वदेशी शासन व्यवस्था और स्वदेशी संविधान की ओर ले जाय।
(घ) चरित्र और विचार के अनुपात में विचार को चरित्र से कम महत्वपूर्ण न माने।

28. सुख – दुःख

1. किसी कार्य के परिणाम की सम्भावना और यथार्थ के बीच का अन्तर ही सुख या दुःख होता है और इस अंतर की मात्रा ही सुख और दुःख को मात्रा होती है।
2. सुख और दुःख का कारण होता है परिणाम की सम्भावना का गलत आकलन। आकलन जितना ही यथार्थ परक होगा सुख या दुःख उतना ही कम होगा या नहीं होगा।
3. सुख और दुःख की उत्पत्ति मन से है। घटनाओं से इसका कोई संबंध नहीं होता।
4. व्यक्ति को परिस्थितियों के अनुसार परिणामों के ठीक–ठाक आकलन की आदत डालनी चाहिये।

29. भूत, प्रेत, तंत्र–मंत्र

1. प्रकृति के अनसुलझे रहस्या को भूत कहते हैं और सुलझ चुके रहस्यों को विज्ञान कहते हैं। जादू, टोना, प्रेत, तंत्र–मंत्र आदि सभी रहस्य इसी श्रेणी में आते हैं।
2. 95 प्रतिशत ऐसी घटनाऐं, असत्य, भ्रम, जाल या हमारे अज्ञान का लाभ उठाने का प्रयास होती है। अतः सामान्यतया ऐसी बातों या घटनाआं को असत्य मानना चाहिये। फिर भी प्रकृति के रहस्य असीम हैं और विज्ञान की सीमाऐं हैं अतः किसी प्रत्यक्ष रहस्य को अस्वीकार करने की जिद नहीं करना चाहिये।
3. भ्रम और भूत एक दूसरे के पूरक होते हैं। प्रत्येक एक दूसरे की वृद्धि में सहायता करता है।

30. विचारक और साहित्यकार

1. विचार और साहित्य अलग–अलग होते हैं जो एक ही व्यक्ति में भी हो सकते हैं और पृथक–पृथक भी।
2. विचारः 1. चिन्तन से निकला हुआ निष्कर्ष होता है।
 2. बुद्धि प्रधान होता है।
 3. बिना साहित्य के आगे नहीं बढ़ सकता।
 4. कठिनाई से ग्रहण होता है।

साहित्य : 1. निष्कर्ष को समाज तक पहुॅचाने का आधार होता है।
 2. कला प्रधान होता है।
 3. भावनाओं को मजबूत करता है।
 4. आसानी से ग्रहण हो जाता है।

3. विचार और साहित्य एक दूसरे के पूरक भी होते है और निर्भर भी।
4. जब विचारकों का अभाव हो जाता है तब निष्कर्ष निकालने का काम साहित्यकार, राजनीतिज्ञ, समाज सेवी अथवा प्रवचनकर्ता करना शुरू कर देते हैं। इससे साहित्य की दिशा भी गलत हो जाती है और समाज पर उसका प्रभाव भी। वर्तमान समय में यही हो रहा है।
5. भिन्न विचारों के मथन के बाद निकला हुआ निष्कर्ष ही अनुकरणीय होता है। कुम्भ की परंपरा सम्भवतः इसो मंथन के लिये शुरू हुई होगी। पुराने समय में सूचना प्रौद्योगिकी का अभाव होने से आम नागरिक ऐसे निष्कर्ष समाज तक पहुंचाने हेतु इकट्ठे होते होंगे।

31. बहुमत

1. किसी निर्वाचित इकाई के बीस प्रतिशत सदस्य यदि किसी प्रस्ताव के विरूद्ध वीटो कर दें तो प्रस्ताव को विवादास्पद मान लेना चाहिये।
2. ऐसा प्रस्ताव मतदान हेतु निर्वाचक इकाई के पास जाना चाहिये जो साधारण बहुमत से पक्ष या विपक्ष में प्रस्ताव पारित करें।
3. यह व्यवस्था स्थानीय इकाई से लेकर संसद तक प्रत्येक निवाचित इकाई में लागू करना चाहिये।
4. कोई निर्वाचित सदस्य लगातार तीन बार असफल वीटो का उपयोग करे तो उसका यह अधिकार समाप्त कर देना चाहिये।
5. निर्वाचक इकाई यदि बहुत बड़ी हो तो उसके बीच एक और इकाई बनाई जा सकती है।

32. यदि मैं तानाशाह होता तो

1. तत्काल घोषणा करता कि तीन महिने के भीतर पचास ऐसे लोगों को सार्वजनिक फांसी, सौ को आजीवन कारावास और पांच सौ को पांच से दस वर्ष तक के कारावास की सजा दी जायेगी जिनके नाम गुप्तचर पुलिस के गुप्त मुकद्में की, सुप्रीम कोर्ट द्वारा विशेष रूप से निर्मित गप्त न्यायिक सेवा द्वारा गुप्त सुनवाई के बाद, तय किये जायें।
2. तत्काल संविधान मे संशोधन करके पांच विभाग "वित्त, विदेश, न्याय, सेना और पुलिस" केन्द्र सरकार के पास रखकर अन्य सभी विभाग समाप्त कर देता और शेष सबकी व्यवस्था परिवार, गॉव, जिला, प्रदेश आर कन्द्र सभाओं में बांट देता।
3. सभी प्रकार के कर समाप्त करके सम्पूर्ण चल अचल सम्पत्ति पर दो प्रतिशत वार्षिक तथा कृत्रिम ऊर्जा का मूल्य दो से ढ़ाई गुना तक बढ़ा देता।
4. केन्द्र सरकार को प्राप्त सम्पूर्ण कर में से पांच विभाग का खर्च पूरा करने के बाद शेष सम्पूर्ण धन देश के प्रत्येक व्यक्ति में समान रूप से वितरित कर देता।
5. तत्काल ही सभी प्रकार के आरक्षण समाप्त करके श्रम की मांग को इस तरह बढ़ने देता कि श्रम के मूल्य में भारी वृद्धि हो जावे।
6. सम्पत्ति के व्यक्तिगत स्वामित्व को समाप्त करके सम्पत्ति परिवार की घोषणा कर देता जिसमें परिवार के प्रत्येक सदस्य का समान हिस्सा होता।